राधास्वामी

मासिक समाचार पत्रिका

संत संदेश

वर्ष : 7 अंक : 79 15 नवम्बर 2003

सदस्यता शुल्क : ——————— भारत, नेपाल व सिक्किम में

वार्षिक : रुपए 40/- एक प्रतिः रुपए 5/-

इस अंक में

1.	बड़े महाराज संत ताराचन्द जी द्वारा फर्माया सत्संग	2
2.	ध्यानाकर्षण बिन्दू व सूचना	35
3.	प्रश्न-उत्तर (महर्षि शिवव्रत लाल जी)	36
4.	अनमोल वचन	37
5.	ज्ञान-सार	37
6.	स्वास्थ्य स्तम्भ (औषधि प्रयोग)	38
7.	सत्संग सार	40
8.	सतगुरु कृपा	42
9.	सहयोग और श्रम (कहानी)	44

राजीव कुमार लोहिया, मुद्रक एवं प्रकाशक द्वारा अपने स्वामित्व में राधास्वामी सत्संग प्रेस हालू बाजार, भिवानी से मुद्रित तथा कार्यालय, हालू बाजार, भिवानी से प्रकाशित

फोन नं. : **01664-241570** (भिवानी आश्रम)
01664-285094 (दिनोद आश्रम)
वेबसाइटः- **www.radhaswamidinod.org**
इ-मेलः- **info@radhaswamidinod.org**

बड़े महाराज संत ताराचन्द जी द्वारा फर्माया सत्संग

भिवानी कैसेट क्रमांक..... 88

दिनांक 2.8.92

समय .....प्रातः

सहज समाधि भली भाई साधो, सहज समाधि भली है।
गुरू प्रताप भयो जा दिन से सुरत न अन्त चली है।
आंख न मूंदूं कान न रूंधूं काया कष्ट न धारूं।
खुले नैन मैं हंस–हंस देखूं सुंदर रूप निहारूं।।
कहूं सो नाम, सुनूं सो सुमरन, खाऊं, पीऊं सो पूजा।
गह उद्यान, एकसम देखूं, भाव मिटाऊं दूजा।।
जहां–जहां जाऊं सोई परिक्रमा, जो कुछ करूं सो सेवा।
जब सोऊँ तब करूं दंडवत पूजूं और न देवा।।
शब्द निरंतर मनुवां राता मलिन वासना त्यागी।
ऊठत बैठत कबहुं न बिसरै ऐसी ताड़ी लागी।।
कहैं कबीर यह उनमुन रहणी सो प्रगट कर गाई।
सुख दुख से यक परे परम सुख, तेहि सुख रहा समाई।।

राधास्वामी! राधास्वामी दयाल की दया!!
राधास्वामी सहाय!!! राधास्वामी!

प्रेमियो, सत्संगियो, माताओ और बहनों, इस शब्द की अन्तिम पंक्तियों में ही सब कुछ कह दिया है–

कहे कबीरा उनमुन रहणी सो प्रगट कर गाई।
सुख दुख से यक परे परम सुख, तेहि सुख रहा समाई।।

हजूर महाराज शिवव्रत लाल जी ने भी इस पर अच्छी बातें बताई हैं। मैंने उनको किसी वक्त सुना था। यह जो पद आप

बताते हो यह सुख दुख दोनों से ही परे है। एक आदमी हर वक्त अपनी मस्ती में रहता है। न वह किसी की घटिया बातों से नाराज होता है और न बढ़िया बातों से कभी खुश होता। वह मस्ती में रहता है। वह उनमुन रहणी है। न उसको कोई खाने का शौक है और न छोड़ने का। ऐसी रहणी एक प्रेम की रहणी है। उसे उनमुन रहणी कह देते हैं। न दुख है और न सुख है। उन्होंने सारा कुछ कह कर यह कह दिया—

शब्द निरंतर मनुवां राता, मलिन वासना त्यागी।

सारा सब कुछ कह दिया। ये कह कर कि—

आंख न मूंदू कान न रूंधूं काया कष्ट न धारूं।
खुले नैन मैं हंस—हंस देखूं, सुंदर रूप निहारूं।।

सो परम पद तो न्यारा बता दिया। पहले तो यह उनमुन रहणी ही बताई है। काफी लोग तो इसी में ही रह जाते हैं। अगर तुम इसी को बड़ा मानते हो तो कबीर साहब ने कहा है—

आ जा सतगुरू नैनन में, नैन झांप मैं लूं।
ना मैं देखूं और को, ना तोहे देखन दूं।।

यहां आकर कबीर साहब ने परम पद की बड़ाई कर दी है। बाद में इस उनमुन रहनी का ख्याल कहीं छोड़ दिया।

नैनन की कर कोठड़ी पुतली पलंग बिछाय।
पलकों की चिक डार के प्रीतम को लेय रिझाय।।

और इस शब्द में कहा है—

आंख न मूंदू कान न रूंधूं काया कष्ट न धारूं।
खुले नैन मैं हंस—हंस देखूं, सुंदर रूप निहारूं।।

पहले दोहों में तो कबीर साहब ने वह बात कह दी और शब्द में ये कह दी। उनका यह एक ही शब्द कइयों को पागल बना रहा है। सबसे पिछली कड़ी को अगर वे समझ लें तो उनका पागलपन दूर हो जाए।

मैंने छोटी उम्र में छः—छः, सात—सात घंटों का ध्यान किया है। ऐसे बड़े खेल देखे हैं और किए हैं। मैं अब भी बताता हूं। बातें करता रहूंगा पर मैं अपनी आंखों को झपकने नहीं दूंगा। पर यह परम पद नहीं है। यह तो उनमुन रहनी है। इसमें काफी ऐसे आदमी मिल जाएंगे जो खुली आंखों से करते हैं। उसमें दो चीजें जरूर आ जाएंगी। वे हैं रजोगुण और तमोगुण। सतोगुण तो बड़ी ही मुश्किल से आता है। अगर सतोगुण भी आ गया तो आगे फिर सार गुण में पहुंचना मुश्किल है। वे इस उनमुन रहनी को गाकर खुश हो जाते हैं और उनकी अवस्था बदल जाती है। कुछ नशा कर लिया और इस तरह बैठे—बैठे देखते रहे। सुमरन उन्होंने कुछ बताया ही नहीं। सुमरन के बिना तो कुछ भी नहीं हो सकता है। कई लोग कह देते हैं कि सुमरन की जरूरत ही नहीं है। पर नाम के बिना न तो घर मिलता है और न ही किसी का पत्र पहुंचता है। नाम के बिना नामी मिल ही नहीं सकता है। झगड़ा करके जीवों का अकाज कर देते हैं। नुकसान कर देते हैं। नाम तो नाम ही होता है—

नाम नाम सब कहें, नाम न चीन्हा कोय।
नाम गुरू की दात है नाम कहावे सोय।।

नाम नामी से मिला देता है। बल्कि जब हम नाम का सहारा लेकर बैठते हैं तो उस वक्त हमारी हाजरी लग जाती है। जिसे नामी से मिलना है वह नाम के बगैर नहीं मिल सकता है।

एक बार दुर्जनपुरा गांव में गया था। वहां एक व्यक्ति आया। उसने मुझसे सीधे शब्दों में कहा—ताराचन्द ! वहां पर नाम की जरूरत नहीं है। मैंने कहा—अच्छा ! मुझे तो पता ही नहीं था। उसने कहा—नहीं, नहीं, नाम की कोई भी जरूरत नहीं है। हमने भी ये साधन किया है। मैंने कहा—तूने तो कुछ भी नहीं किया। तू जैसा था अब तो वैसा भी नहीं रहा। जब एक लड़की अपने घर में

(गरीब पति के सहारे) बैठी है तो उसे यही तो कहते हैं कि ये खानदान घर की है। अगर वह गरीब पति को छोड़ कर गये गुजरे के साथ हो लेती है तो वह अपने दोनों ही दीन खो बैठती है। उसे खानदान घर की कौन कहेगा? गये गुजरे घर की हो जाती है। सो तू तो गया गुजरा है। कोई भी ऐसा इतिहास नहीं है कि नाम के बिना किसी को परमात्मा मिला हो। उसने कहा—हमने तो ऐसे किया है। वह आज तक भी उस गति तक तो पहुंचा नहीं। पहले जिन महात्माओं के पास था उनसे पहले ऐब तो छुटे हुए थे। उनमुनी रहणी के साथ बनकर ऐब और चालू कर लेते हैं। वह दुख सुख से परे जो परमपद है वहां न तो कोई ऐब है और न दुख है और न सुख है। आप यह प्रश्न कर सकते हो कि दुख सुख के बिना वहां और क्या होगा? जब उनमुन रहनी में ही दुख सुख का पता नहीं है तो उस जगह पर जाकर क्या कहता है।

जहां पुरुष वहां कछु नहीं, कहैं कबीर हम जानी।

जहां वह पुरुष है वहां कुछ भी नहीं है। न वहां दुख है और न सुख है। वहां तो ऐसी शान्ति है कि दुख—सुख दोनों को ही हम भूल जाते हैं। यही स्वामी जी कहते है—

सुरत हुई अविकर मगनानी।
पुरुष अनामी जाय समानी।।

वहां सुरत मग्न होकर समा जाती है। दुख—सुख से आगे चली जाती है। तो आप फिर प्रश्न कर सकते हो। जब वहां दुख और सुख दोनों ही नहीं हैं तो वहां और क्या है? इसे कहते हैं कि जैसे गूंगे गुड़ खाई। फिर यह भी कोई न कोई प्रश्न कर लेगा कि महाराज हम तो नहीं मानते। कोई ऐसी चीज बताओ जिससे कुछ अनुमान तो लगे। जैसे आपको कोई न कोई तकलीफ हो जाती है।

मेरा एक प्रेमी था। मैं उसके पास चला गया। उसका हाथ

कट गया था। वह बड़ी त्राहि मार रहा था। डाक्टर ने उसको सूआ लगा दिया। फिर वह सुख दुख दोनों को ही भूल गया। उसको न तो हाथ कटे का ही दुख रहा और न ही उसे किसी सुख का पता था। वह तो उस सूए से मस्त हो गया। बेहोश हो गया। वह दोनों से ही परे चला गया। यदि वह मर जाता तो ये भी कह देते कि वह तो मर गया। पर वह तो जिंदा ही रहा। न उसको सुमरन का सुख, न कोई और दुख—सुख है। अब कोई कह भी सकता है कि मैं तो इसे भी नहीं मानूंगा। तुम मान जाओगे। मैं ही ये बात कहता हूं। तो वह क्या है? तुम तो थोड़े से भी सुख का वर्णन नहीं कर सकते हो। थोड़े से ही सुख में तुम अपने आपको भूल जाते हो। यहां तक कि तुम इज्जत और बेइज्जत को भी भूल जाते हो। केवल थोड़े से ही सुख की खातिर। तुम मेरी बात को सोचो। मुझ से कहलवाओ मत। मेरे दाता बताया करते थे कि तुम भूल जाते हो। तुम सभी सुख दुखों को ही भूल जाते हो। तुम न अपनी इज्जत का ही ख्याल रखते हो और न ही बेइज्जती का ख्याल रखते हो। इसी तरह उस स्थान पर जो सुख है, न वहां पुण्य है और न पाप है।

पाप पुण्य दोनों नहीं म्हारी हेली! उन निर्गुणियों के देश।

वहां पाप और पुण्य दोनों ही नहीं हैं। वइ इनसे परे है। यह जो उनमुनी रहनी है यह तो उरला ही व्यवहार है। उनमुनी रहणी तो हर एक आदमी की हो जाती है। कइयों को होश भी रहता है और पागलपन भी दिखा देते हैं। जैसे कई शराबी किसी हाथीवान को कह देते हैं कि कटड़े का क्या मोल है? वह उनकी उनमुन रहणी ही है। वे मस्ती में कह देते हैं। जब आंखें खुलती हैं तो फिर रोते हैं कि जुल्म ढ़ा दिए। फिर वे माफी मांगने जाते हैं। अब आप लोग प्रश्न कर सकते हो कि आप तो दूसरी ही बात ले आए। अब उस अवस्था की बातें किसका उदाहरण देकर समझाऊं, किसको

दिखाऊं? उस अवस्था की बातों का तो तुम्हें वहां पहुंचने पर ही पता लगेगा। या शब्द की कमाई करोगे तब ही पता लगेगा। पर पहुंचोगे कब? दढ़ विश्वास और निश्चय करके। यह उनमुन रहनी की अवस्था कइयों की देखते हैं और देखी हैं। मैं सच्ची बातें कहता हूं।

महाराज पं० फकीरचन्द जी का नाम लेता हूं। वे पूरण पुरुष थे। मेरे गुरू महाराज ज्यादा घूमे नहीं उनकी दया बड़ी अपार थी। वे सत्संग किया करते थे। उनके पास एक सत्संगी आया। उन्होंने कहा—संत ताराचन्द! ये दिखता है और यह बहुत अच्छा है। मैंने कहा—हां जी। उन्होंने कहा—नहीं, यह अच्छा नहीं है। एक बार मैं इससे मिला। मैंने इसको जयराम जी की कही तो इसने मेरे से बात नहीं की। मैंने पूछा—क्या बात थी? उन्होंने बताया कि ये सोहम् की धुनी के देश में पहुंच गया था। अब इसका एक लड़का मर गया है। ये दिवारों को टक्कर मारता फिरता है। ये पागल हो गया है। सोहम् की धुनी के देश में पहुंचकर भी इसने टक्कर क्यों मारी? वहां तो ये दुख सुख दोनों से ही आगे निकलने की बातें कहते थे। मैंने कहा कि आप तो परम संत हो पर मैं कहता हूं कि यह सोहम् की धुनी दुख—सुख से परे नहीं है। यह तो दुख सुख में ही रह जाती है। कोई भाई ऐसा ख्याल भी न करना। मैं किसी का खंडन नहीं करता। दुख—सुख में क्यों रह जाती है? क्योंकि यह रचना में ही रह जाती है। फिर पूछोगे—रचना में रहने का अर्थ क्या है? मैं बताता हूं कि यह तो प्रलय और महाप्रलय में आ जाती है। इसलिये इसको दुख सुख की अवस्था से परे नहीं कह सकते। दुख की सुख की अवस्था से परे तो वही अवस्थाएं हैं जो प्रलय, महा प्रलय में नहीं आती हैं। सो सतखंड से नीचे की सभी अवस्थाएं या देश प्रलय महाप्रलय में आ जाते हैं। सतखंड से आगे की दशाएं प्रलय महाप्रलय में नहीं आती हैं। सो वहां जीव

दुख—सुख से आगे चला जाता है। उस उनमुनी अवस्था से भी वह आगे है। सीधे शब्दों में ही पूछना चाहते हो तो जिसे महात्मा लोग सातवीं भौमिका (भूमिका) कहते हैं उस भौमिका में भी आना—जाना रह जाता है। अब तो किसी न किसी के दिल में बड़ा झटका भी लगा होगा कि ये कौन सी अवस्था है? यही तो उनमुनी (सातवीं भौमिका) अवस्था है। उसको महात्मा सातवीं अवस्था भी कहते हैं। या यूं भी कहते हैं कि फलां महात्मा सातवीं भौमिका में पहुंच गया है। सातवीं भौमिका वे किसे कहते हैं और उसमें क्या होता है? यह उस उनमुनी अवस्था में ही आ जाती है। पर आपने यह तो ख्याल नहीं किया है कि उस सातवीं अवस्था (भौमिका) में पहुंचने वाला कितना खाना खाता है? गांव तिगड़ाने में महात्मा रहा करते थे। वे करणी के धनी थे। वे उस भौमिका में थे। संत गति दूसरी अवस्था होती है। उनकी ऐसी भारी अवस्था थी कि किसी भी जमींदार का वे एक बीघे का तो साग ही खा जाते थे। सोचो! वे ऐसे सातवीं भौमिका के धनी थे। मैं यह नहीं कह सकता कि वे नहीं थे। बहुत अच्छे थे। पर वे भी उनमुनी अवस्था में ही रह जाते हैं आगे और स्थान भी रह जाते हैं। सतखंड से नीचे—नीचे तक ही उनमुनी अवस्था पूरी हो जाती है। सतखंड अवस्था में पहुंचने वाले उस उनमुनी अवस्था से आगे चले जाते हैं। इसी तरह से वे सातवीं भौमिका वाले भी हैं। वह भी भारी सुख माना जाता है और वे परवाह नहीं करते। जैसे एक को थोड़ा नशा होता है और दूसरे को नशा ज्यादा हो जाता है। जो ज्यादा नशे में होता है तो उसे कहते हैं कि यह तो बेहोश या पागल है। थोड़े नशे वाले को थोड़ा नशा किया बता देते हैं। सो इसी तरह नाम का भी नशा होता है और उसी की यह अवस्था होती है। आप यह भी पूछोगे—क्या उससे आगे जाने वालों को उनसे ज्यादा नशा होता है? हां, उनको ज्यादा नशा होता है। पर एक साधन कपालिया सहारता है और

एक सुरत शब्द का योग करता है। कपालिया सहारने वाला अपनी उम्र बढ़ा लेता है। वह अपने स्वांसों को ऊपर खींच लेता है। पर वह मुक्ति की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता। उसकी मुक्ति म्यादी है। और जो उससे भी ऊपर जाने वाला है, जो सुरत शब्द का योगी होता है वह तो सतखण्ड और राधास्वामी धाम में जाता है और आता है। इसको कहते हैं कि वह तो रोज ही मरता और जन्मता है। कबीर साहब ने तो यह भी कह दिया—

पहले मरना सो ही मरना।
पीछे मरना, विपत का भरना।।

जो पहले मरना है, वही तो है असली मरना है। सो उनमुनी अवस्था में मरा नहीं जाता। फिर मरना कौन सा है? उन मंडलों को छोड़कर जो आगे चला जाता है उसको आखरी समय में कोई भी दुख नहीं होता है। कई—कई महात्मा तो त्राहि—त्राहि करके मरते हैं। मेरी ही एक बात है। हम महाराज द्वारका दास के पास चले गए। उन्होंने एक महात्मा के बारे में बातें बताई। उन्होंने कहा—बेटा क्या बताऊं, मेरा दिल घबराया हुआ है। मैंने कहा—क्यों महाराज! उन्होंने कहा—एक महात्मा बहुत ऊंचा चढ़ा हुआ था और वे उस महात्मा के पास गए तो उस महात्मा ने कहा—मैं बहुत ही दुखी हूं। उसने अपने आपको बेहद दुखी बताया। हमने कहा—बाबा! आपने तो हमारी भी श्रद्धा को तोड़ दिया है। जब तू उस परमपद में पहुंचा हुआ था तो दुखी किस तरह हुआ? दुखी कौन होता है? जिसको क्लोरोफार्म की शीशी सुंघा दी जाती है। उसको तो दुख—सुख का पता ही नहीं रहता है। वह तो बेहोशी में रहता है। ख्याल भी रहता है और बातें भी करता रहता है पर उसे शरीर के दुख—सुख का पता नहीं रहता है। मेरे मास्टर को कभी अपैन्डिस की बीमारी थी। इसने आप्रेशन करवाया। मैं चला गया। मैंने इसको देखकर बातचीत की। मैंने डाक्टर से कहा—आपने तो

जुल्म कर दिया। यह क्या कर रखा है? यह तो पहचानता भी नहीं है। उसने कहा—नहीं, इसको क्लोरोफार्म सुंघाया है। वैसे यह सभी को जानता पहचानता था और ये ठीक—ठाक बातें भी कर रहा था। परन्तु जल्दी ही उस बात को भूल भी जाता था। उस अवस्था को मैंने देखा। मैंने सोचा—ये बिल्कुल ठीक है। ऐसा इसी लिए किया गया है कि दर्द का पता नहीं लगेगा। सोचो जिसकी सुरत नौ द्वारों को खाली करके चली जाती है, जो कपालिया साधता है उसको भी पता नहीं लगता है तो आप कहोगे कि सुरत शब्द के योगी को भी पता नहीं लगेगा। मैं बताता हूं कि उसे पता लगता है। वह अपनी सुरत को नौ द्वारों से आगे खींच ले जाता है और वह जिंदा भी रहता है और मुर्दा भी रहता है। जिंदा किस तरह? स्थूल शरीर में तो उसके प्राण रहते हैं पर उसमें चेतन शक्ति नहीं रहती। ये बातें आप लोगों को क्यों बताईं? क्योंकि कई लोग कपालिया साध लेते हैं। वे नीचे के शरीर को मुर्दा कर देते हैं। ऐसा ही सुरत शब्द के योगी भी कर लेते हैं। पर सुरत शब्द के योगी चेतन शक्ति को तो खींच लेते हैं पर तमाम चेतन शक्ति को नहीं। उन्हें होश भी रहता है जब उस आनन्द में, उस शब्द में चले जाते हैं। तो इन बातों को सीख कर ही अगर बकना शुरू कर देता है तो वह बड़ा पापी है। मैं जो कहता हूं वह काम करके सीख लेना और तभी कहना। बात सीखने से तो मेरे गुरू ने मना कर दिया था। मैंने दो बातें पूछी थी। उन्होंने मुझ से कहा कि चली तो नहीं कोस और थक भी गई। एक कोस तक तो चली नहीं और कहती है कि बापू हार गई। सो ये बात गलत है। अपने आप तजुर्बा करो। पहले—पहले जो लग्न लगती है उस वक्त जीव कर सकता है।

जो लग्न पहली लगे, ऐसी निभा दे ओड़।
अपनी तो क्या गिने तारै पुरुष करोड़।।

वह जीव करोड़ों का उद्धार कर देता है। सो कपालिया और सुरत शब्द के योग में इतना फर्क है। जैसे रात का और दिन का है। सुरत—शब्द का योग दिन है तो कपालिया रात है। कपालिया सहारने वालों की आशा कभी नहीं मरती। उस आशा से वे बंध जाते हैं। आप लोगों ने कोई प्रश्न उठाया होगा या किसी ने कोई ख्याल किया होगा—क्या ऐसा उदाहरण है? अरे ऐसे उदाहरण तो हजारों हैं। हमने सुने हुए हैं।

एक राजा ने एक भांड़ से कहा—भांड ! तू सारे ही खेल दिखाता है। हमें एक योगी का खेल तो दिखा दे। उसने कहा—अच्छा, दिखा दूंगा जी। उसने दो खेल दिखा दिए। राजा ने कहा—पहले तो मुझे सन्यासी त्यागी का खेल दिखा दे। उसने कहा—ठीक है जी। वह महात्मा बन गया और उसी गांव के बाहर बैठ गया। इतना त्यागी बन गया कि दुनिया में शोर शराबा हो गया। उसके पास बहुत लोग गए। उसने किसी के भी चार पैसे नहीं लिये। उसने पूरा त्याग दिखाया। राजा भी गया। राजा ने एक हजार की थैली आगे रख दी। उसने कहा—इसे उठा ले जाओ। राजा ने उसको पहचाना नहीं था क्योंकि उसने तो रूप ही बदल रखा था। फिर उसने दस हजार की थैली आगे रख दी। उसने कहा—राजा इसे उठा ले और चला जा।

अब त्यागी का तो रूप ही दूसरा हो जाता है। हम तो त्यागी नहीं होते हैं। हम तो लागी हो जाते हैं। देश में कितने ही गुरू आए और सुधार करते रहे। पर ये देश तो नहीं सुधरता? हम त्यागी नहीं हैं। हमारे अन्दर तो वासना भरी पड़ी है। उसी वासना की रेडिएशन से हमारे शिष्यों में वासना भर जाती है। फिर बताओ वे कैसे तिरेंगे? अगर कोई महात्मा महापुरुष मिल जाता है तो उसका कोई असर पड़ता। पर उनकी बातें सुननी बड़ी मुश्किल हो जाती हैं क्योंकि जो बैल या पशु बने फिरते हैं वे कभी भी सुन

नहीं सकते। अगर ये सुन लें तो उनके प्राण निकल जाते हैं। कोई किसी से बंधा हुआ है और कोई किसी से बंधा हुआ है। भक्ति तो निष्पक्ष ही कर सकता है—

भक्ति करे तो कुल नहीं, कुल बिन भक्ति नहीं होय।
भक्ति करे कोई सूरमा, जात वर्ण कुल खोय।।

वे तीनों चीजों को खो देते हैं।

भक्ति करो, कुल में रहो, अड़े रहो दरबार।
दो घोड़ों पर वो चढ़े जो चारों पैर असवार।।

मैं आपको उस महात्मा की बातें बता रहा था। वह बड़ा भारी त्यागी हो गया। राजा अपनी थैली उठाकर चला गया। राजा को निश्चय हो गया कि साधु बड़ा अच्छा है। दूसरे दिन राजा आया, वह महात्मा उसको नहीं मिला। लोगों ने कहा कि वह महात्मा तो गए। लोगों ने उसको ढूंढ़ा। वे कहते थे कि वह तो खुदा था। बड़ा त्यागी था। त्याग में बड़ा आनंद है। एक महात्मा ने कहा है—

संग्रह में होती फनाफनी, नफा मिलै त्यागन में।

सो तुम त्यागना सीखो। अगर तुम अपने मन के विचारों को नहीं छोड़ोगे तो त्यागना कभी भी नहीं सीखोगे। त्यागना सीखो फिर तुम सब कुछ बन जाओगे। कितनी चीजें त्यागनी हैं। एक चीज का सहारा ले लो। बाकी सभी त्याग दी जाती हैं।

लोगों ने उसको ढूंढ़ना शुरू कर दिया। महात्मा कहां गया? मिला नहीं। वही महात्मा भांड़ का स्वांग भरकर राजा के दरबार में आ गया। उसने कहा—राजन! मुझे इनाम दो। राजा ने पूछा कि इनाम किस बात का? भांड ने कहा—जी वाह! मैंने आपको त्यागी का स्वांग दिखाया था। राजा ने आश्चर्य से कहा—क्या वह तू ही था? अरे बेवकूफ ! जब मैंने तुझे दस हजार रुपए की थैली दे दी थी तो उसे उठाकर चला जाता। उसको छोड़ क्यों दिया? आज तू इनाम मांगता है और दो चार रुपये में ही खुश हो जाएगा। भांड

ने कहा—अगर वह थैली ले लेता तो मेरे त्याग को बट्टा लग जाता। हे राजन! मैंने तो त्याग दिखाना था।

सो हम गुरूओं ने तो त्याग को बट्टा लगा दिया है। इन गुरूओं ने अपने बेटे पोतों की जायदाद बनानी शुरू कर दी। इन गुरूओं ने हराम का खाना शुरू कर दिया। इन गुरूओं ने इन भोले जीवों का (तुम्हारा) धन भी लूटा और इज्जत भी लूटी। मैं सच्चाई से कहता हूं—कोई धोखा करके नहीं कहता हूं। इन गुरूओं ने तुम्हारे साथ धोखा किया फिर भी तुम उनसे बंध गए और बैल बनकर बैठ गए। मैं भी तुम्हारे साथ ऐसा करता हूं तो मेरे पास मत आना, कभी भी मेरा मुंह न देखना। आप प्रश्न कर सकते हो कि आप तो सच्ची बात कहते हो। फिर हम आप का काम क्यों नहीं करते? हमारे ऊपर असर पड़ना चाहिए। सो मैं बताता हूं कि मेरे अंदर कई कमियां हैं। इसलिए असर कम पड़ता है। मैं अपनी वे कमियां भी बता देता हूं। मेरे पास पुलिस और फौज का पहरा नहीं है। जीव तो पर्दे में ही पूजा करते हैं। दूसरे मेरे पास धन का ढ़ेर भी नहीं है। तीसरे मेरे पास कोई सैक्रेटरी भी नहीं है और न ही मेरे गीत गाकर पूजा करवाने वाला ही है। अगर कोई गीत गाता है तो उसको मैं फटकार देता हूं। मैं कहता हूं कि पापी! तू डूब जाएगा। वे कहते हैं—क्या सच्ची बातें भी न कहें? नहीं, सच्ची बातें भी नहीं कहनी है। सच्ची कहने वाला भी मारा जाता है। जैसी भी बात होगी दुनिया अपने आप ही कहती चली जाएगी। जैसा जिसका भाव होगा अपने आप ही काम कर लेगा। क्या कहा है? मेरी बातें आपने सुनी हैं? मैं तो अंग्रेजी भी नहीं जानता हूं। मुझे टनफन लगानी भी नहीं आती है और न ही मेरे गले में कोई हीरे मोतियों की माला है। न सोने चांदी के कड़े हैं। न मेरे पास घड़ी या कोई जेवर ही हैं। मेरा साधारण लिबास जो मेरे बुजुर्गों का, जो मेरे मां—बाप का था, वही है। वे मेरे मां—बाप कौन थे? वे

थे—कबीर साहब, दादू, पलटू, रैदास, नानक, स्वामी जी महाराज। मेरे सतगुरू महाराज का सादा लिबास था। मैं उनकी औलाद होकर दूसरा आडंबर क्यों रचूं? आज तो बल्कि हम ऐसा सांग करते हैं कि रंडी भी नहीं कर सकती। परन्तु साधु कर लेता है। क्या वे काल का अवतार नहीं हैं? मैं गलत बोलता हूं तो बोल लेना।

सो मैं कह रहा था कि उनमुनी से आगे चलने की कोशिश करनी चाहिए। आप लोग उसी उनमुनी अवस्था में बंध जाते हो। उस अवस्था में क्या मिलता है? यह आप भी समझ गए होंगे कि स्वर्ग वैकुंठ मिल जाएगा। उस उनमुनी अवस्था में। उस उनमुनी अवस्था को छोड़ कर उस से परे चलो। कबीर साहब ने कहा—

दुख—दुख दोनों नहीं म्हारी हेली, निगुर्णियों के देश।

उस निगुर्णियों के देश में दुख सुख दोनों ही नहीं हैं। वहां चलो। सो हमारे ऊपर उनका बड़ा असर पड़ता है। मैं आपको बता रहा था, मेरी बात अधूरी रह गई एक तो सुरत शब्द के योगी के बारे में और दूसरी बात कपालिया साधने के बारे में थी। इस तरह की बातें तो नौजवान ही सीखता है और नौ जवान ही करते हैं। सुरत शब्द का योग तो साठ वर्ष का भी कर लेता है और आठ वर्ष का भी कर लेता है। इसे सहज योग कहते हैं। यही वह साधन है जिससे कि अपनी ही जिन्दगी में देख सकता है कि वह किस स्थान तक पहुंचा है। वह यह भी कह सकता है कि मैं स्वर्ग में गया। वैंकुठ में चला गया और मैं राधास्वामी धाम में पहुंच गया। सतखंड में पहुंच गया। वह इसी जिन्दगी में बता सकता है। उस जगह पर पहुंच जाता है वही बताता है, नहीं तो उसका अनुभव बोल देता है। ये बातें हैं। आप कहोगे कि जैसा आपने त्यागी का प्रमाण दिया है, क्या ऐसा प्रमाण कपालिया और सुरत शब्द के योगी का भी कोई है? सुरत शब्द के योगी तो काफी मिल जाएंगे।

प्राणायाम करने वाला नहीं मिलेगा। जमाने के मुताबिक टाइम निकल गया है। अगर कोई लाखों में एक मिल भी गया तो वह भी उरले ही व्यवहार में रह जाता है। वह तो ऐसे ही है जैसे एक आदमी साईकल पर चढ़ा सड़क–सड़क जा रहा है। आगे सड़क बंद हो गई। खेत आ गए हैं। उस खेत में तो साईकिल नहीं चलेगी। सुरत शब्द का योग तो ऐसा है कि चाहे खेत आए, चाहे सड़क हो वह तो फटाफट चलता रहता है। उसे टोकने वाला कोई भी नहीं है। मैं मन गढ़त बातें नहीं कहता हूं। आप लोगों को समझाने के लिए प्रमाण भी देता हूं।

राजा ने उसी भांड से कहा–भाई ! मुझे अब एक स्वांग और दिखा। उसने पूछा–किस चीज का? राजा ने कहा—वह तो तुम्हारा त्यागी का स्वांग था। अब योगी का और दिखा। उसने कहा—जो क्रिया कपालिया वगैरा की योगी करते हैं वह स्वांग मैं दिखा दूंगा। वह चला गया और कपालिया साधना सीख आया। मैं कपालिया की बातें बताता हूं। तुम रोज कोर्स करना शुरू कर दो। अगर तुम्हारा एक दिन भी उस कोर्स के दौरान ब्रह्मचर्य क्षीण हो गया तो बिमारी लग जाएगी। उस कोर्स से प्राणायाम करने वालों को ब्रह्मचर्य की बड़ी भारी जरूरत पड़ती है। कोई प्रेमी यहां भी बैठा होगा। भूमि उनसे खाली तो नहीं है। जो यहां बैठा होगा तो वह समझ जाएगा कि अगर प्राणायाम करने वाले का ब्रह्मचर्य एक दिन भी गिर जाता है, तो उसके दिमाग में कमजोरी पहुंच जाती है। सुरत शब्द के अभ्यासी को भी इसकी जरूरत पड़ती है। सो वे बड़ा खतरा खरीद लेते हैं। वे जमाने के मुताबिक करते हैं। यह मैं भी कहता हूं कि अपने शरीर को ठीक रखने के लिए हमें कुछ न कुछ काम करना चाहिए। जैसे यह भाई यहां बैठा है, बहुत उम्र का है और अब भी दौड़ लगाता है। अब भी यह आसन लगाता है।

पर इनमें मुक्ति नहीं है। मैं इनके सामने ही कह रहा हूं। मुक्ति और चीज है।

आसन लाके बैठ गया, मिटी न मन की आस।
कोल्हू के बैल ज्यों, घर में कोस पचास।।
मन जा तो जाने दे गह कर राख शरीर।
बगैर चढ़ाए कमाण पर, कैसे चाले तीर।।

ऐसे आसन लगाकर बैठने पर भी मन दौड़ता है तो शरीर को मत दौड़ाओ। वह मन अपने आप ही रह जाएगा और इस तरह उसकी चाल ही बंद हो जाएगी।

दौड़त–दौड़त दौड़िया, जहां तक मन की दौड़।
दौड़ थकी मन थिर हुआ वस्तु ठौड़ की ठौड़।।

दूर जाने की जरूरत नहीं है। दोहे से ही तुम्हारी तसल्ली कराता हूँ। और मेरे पास क्या है? अब उस भांड ने जाकर प्राणायाम सीख लिया। मैंने भी भगवान देव आचार्य से गुरूकुल में प्राणायाम सीखा और गायत्री सीखी। बहुत साल पहले की बातें हैं। प्राणायाम किया करता था और मैं तालाब में गोता लगा लिया करता था। काफी देर बाद निकलता था। लोग कहते थे कि डूब गया है। क्योंकि मैं स्वांस रोक लिया करता था। एक दिन एक सैकिंड रोकोगे। दूसरे दिन डेढ़ सैकिण्ड। इसी तरह से बढ़ते–बढ़ते स्वांस रोकने के समय को बढ़ा लेते हैं। इस तरह से उम्र बढ़ा लेते हैं। तो मैं भी काफी देर तक स्वांस रोक लेता था। अब यह अवस्था है कि दो दिन तक भी रोके रखूं। मेरे पास बैठ जाओ और देख लो। मेरे सत्संगी मुझे बोलते हैं। मेरे कमरे की खिड़की के नजदीक मेरा तख्त है, अगर मेरा स्वांस आता सुनाई देता है तो बोलते हैं नहीं तो मुझे नहीं बोलते। इसे मुर्दाआसन कहते हैं उस मुर्दा आसन में रोटी कम खानी पड़ेगी। नहीं तो मारे जाओगे। यही तो मैं बताता हूं। सातवीं भौमिका में पहुंचने वाला तो बहुत ज्यादा

खा जाता है पर सातवीं मंजिल पर पहुंचने वाले का खाना कम हो जाता है। कितना कम हो जाता है? पहली अवस्था तो उसमें यह आती है कि देवता की तरह वासना लेते हैं। फिर दूसरी अवस्था आती है कि वह प्रकाश का आहार करते हैं और तीसरी अवस्था में शब्द का आहार करते हैं उनका खाना बहुत ही सूक्ष्म हो जाता है। शरीर किस तरह रहता है यह तो तुम ही जानते हो। वे शब्द का आहार लेते हैं और वे अपनी मस्ती में रहते हैं। इसीलिए उनका खाना कम हो जाता है। कबीर साहब भी कहते हैं—

दुनियां खावै और सोवै।
दास कबीरा जागै और रोवै।।

स्वामी जी कहते हैं—

गुरू तो पूरा ढूंढ़ तेरे भले की कहूं।
भोजन बहुत मत जीम तेरे भले की कहूं।।
तू नींद भर मत सो तेरे भले की कहूं।
पिछलों की तज टेक तेरे भले की कहूं।
वचन तान मत मार तेरे भले की कहूं।।

बहुत सी बातें भले की कही हैं। हम उनमुनी रहणी में भी इसी तरह हो जाते हैं। आनन्द बहुत लेते हैं। वे जो भी काम कर लेते हैं उसमें भी आनन्द मानते हैं। जैसे घटिया आदमी घटिया कामों में आनन्द लेते हैं। वे अपनी इज्जत को भी भूल जाते हैं। इसी अवस्था पर आगे जो परम पद तक जाते हैं उनकी अवस्था उस नट के खेल की तरह है वह मैं आगे बताऊंगा।

उस भांड ने प्राणायाम और कपालिया साधना सीख लिया। राजा ने कहा—मैं तुझे इसके लिए एक घोड़ा और एक जोड़ा दे दूंगा। सोचो! मेरी बात के ऊपर ख्याल करना। अब वह आया और राजा के दरबार में आ बैठा। उसने समाधि लगा ली। उसने कपालिया खैंच तो लिया पर उसे उतार नहीं सका। वह उस

अवस्था में १० दिन, २० दिन, महीना, दो महीने रहा और लोग पहरा देते रहे। देखते रहे। फिर राजा ने कहा—इसके ऊपर कड़ाहा औंधा करके डाल दो। एक कड़ाहा उस पर औंधा डाल दिया गया। राजा भी मर गया और कड़ाहे के ऊपर मिट्टी चढ़ गई। उस राजा का बेटा राजा बना, वह भी गुजर गया। उस समय उसके पोते का राज था। उस समय उस जमीन को किसी ने खोदा और उस कड़ाहे पर चोट पड़ते ही टंकार की आवाज हुई तो टंकार की आवाज से उसकी समाधि खुल गई। लोगों ने उसको बाहर निकाल लिया। बाहर निकलते ही उसने कहा—राजा! घोड़ा—जोड़ा ला। इस प्रणायाम खींचने से मन की वासना दूर नहीं होती है। मन की गंदी वासनाओं को अगर दूर करना है तो एक ही यत्न है कि सुमरन करना सीखो। जो सुमरन नहीं करता है, वह कभी भी विषयों से दूर नहीं हो सकता है। जो सुमरन नहीं करता है उसकी गंदी वासनाएं दूर नहीं हो सकती हैं। आपने सुना होगा—

राधास्वामी मेहर करें जिस जन पर।
धुन सुन कर मन समझाई।

शब्द की धुन सुन कर ही मन पतिया जाता है। क्योंकि राधास्वामी दयाल उस पर दया करता है। वह राधास्वामी कौन है? वह राधास्वामी ही शब्द है। वह राधास्वामी अकाल पुरुष है। कुल मालिक है। वह सतगुरू के चोले में आ जाता है। सो वह दया करता है और शब्द धुन सुनकर ही मन काबू में आता है और कोई भी यत्न नहीं और किसी तरह भी नहीं। ये जितने खेल हैं इनसे काबू नहीं आ सकता है। मैं दूर नहीं हूं। मेरे पास आ जाना और पूछ लेना। मन न तप से काबू आता है न जप से आएगा। न पूजा—पाठ से आएगा। न होम—यज्ञ से आता है। किसी भी चीज

से मन काबू नहीं आएगा। मन तो केवल शब्द धुन सुनकर ही काबू में आएगा। यही एक जादू है मन को काबू करने का और कोई भी नहीं है। बड़े—बड़े तपेश्वरी मारे गए हैं। मन बड़ा जालिम है।

साधो मन है बड़ा जालम।
जिसका पड़ा वास्ता मन से, उसी को है मालम।।

मेरा प्रसंग तो यही था उनमुनी अवस्था से आगे जाना। मैंने बातें तो काफी बता दी हैं। फिर भी बहुत ज्यादा बातें रह भी गई हैं। जब रील लम्बी चढ़ती है और सतगुरू दया करता है तब पता लगता है कि बातें तो बहुत ज्यादा रह गई हैं। हम तो नीचे की ही बातों में बंध जाते हैं। हम अपनी राह छोड़ देते हैं और गिर जाते हैं। उनमुनी अवस्था को मैं अच्छी तरह समझता हूं। पर उसी के लिए अच्छी है जिसने संसार का आनन्द नहीं लेना है। उसी के लिए ही अच्छी है जिसने किसी की गलत बातें नहीं सुननी हैं। उनमुनी अवस्था उनके लिए अच्छी नहीं जिसने आगे जाना है।

मेरे पास कई प्रेमी आते हैं। मैं भी उसको चाहता हूं कि उससे आगे निकलो। कोई—कोई टाइम आता है। मेरा भी ऐसा वक्त था मैं बात नहीं करना चाहता था। मैं सोचता था कि मैं मस्त पड़ा रहूं। किसी से बातें ही न करूं। किवाड़ बंद कर लूं। फिर जब मैं संतों की शरण में गया और उनको बताया तो उन्होंने कहा—गिर न जाना, यह तो ऐसी ही अवस्था है। मेरे महाराज जी तो चोला छोड़ गए थे। मैं महाराज पण्डित फकीर चन्द जी के पास गया। उन्होंने कहा—इस अवस्था को बदल दे। मैं यही बातें बताने के लिए आया हूं और शब्द का अभ्यास भी बहुत कम किया करो। आपने काम करना है। नहीं तो जल्दी जाना पड़ जाएगा। सो जाना आना तो संतों के हाथ में ही होता है। बस, शब्द का अभ्यास ज्यादा किया और संसार से ताल्लुक टूट गया। क्यों टूट जाता है? क्योंकि अभ्यास से प्रारब्ध खत्म हो जाती है।

अब ये बातें थी। किसी को समझ नहीं पड़ी होंगी कि क्या शब्द की कमाई से प्रारब्ध खत्म हो जाती है? बिल्कुल ठीक है कि शब्द की कमाई से प्रारब्ध खत्म हो जाती है। पिछली प्रारब्ध रहती है तभी तक हम संसार में रहते हैं। जब हमारी प्रारब्ध समाप्त हो जाती है हम संसार को छोड़ जाते हैं। जैसे मैली तलवार को सांण पर चढ़ाते ही उसका सारा मैल उतर जाता है और वह चमक उठती है। क्योंकि उसका सारा मैल उतर जाता है इसी तरह से शब्द का अभ्यास करने वाले का भी सारा मैल दूर हो जाता है। उसके ऊपर मल—विक्षेप और आवरण इन तीनों का युगों से ही मैल था, ये तीनों युगों का था। अब चौथे युग में तो नाम की कमाई ही करनी होती है। ये बातें मैंने आपको कई बार बताई हैं। इनको दूर करने के लिए कोन—कौन युग में किस—किस सी चीज की आवश्यकता थी?

जैसे सतयुग में आवरण था और सुरत को आवरणों ने ढक रखा था। उन आवरणों को दूर करने के लिए विवेक था। यह विवेक आज का नहीं है यह सतयुग से चला आ रहा है। विवेक से सत असत का निर्णय होता था। सो उस वक्त पर जीव सत कोटि के थे। क्या उस वक्त राक्षस नहीं थे? कोई ये प्रश्न भी कर सकता है—क्या सभी जीव सतकोटि के थे? नहीं, सारे सत कोटि के नहीं थे। राक्षस भी थे। राक्षसों के लिए तो उस वक्त भी कलयुग था और भले आदमियों के लिए तो आज भी सतयुग है। सो उस जमाने में आवरण दूर करने के लिए विवेक था। फिर आया त्रेता युग। त्रेता युग में आत्मा पर विक्षेप का पर्दा पड़ गया। पहले तो आत्मा पर आवरण का मैल था ही अब दूसरा मैल विक्षेप का भी चढ़ गया। विक्षेप पड़ने से सुरत मैली हो गई। इस विक्षेप को दूर करने के लिए अष्टांग योग निकाला। महात्माओं ने त्रेता युग में यही साधन बताया था। फिर त्रेता भी चला गया तो द्वापर आ

गया। द्वापर में और भी ज्यादा मैल चढ़ गया। आत्मा और भी मलिन हो गई। क्योंकि इसके ऊपर मल का एक परदा और चढ़ गया। अब इसके ऊपर मल विक्षेप आवरण के तीनों ही परदे पड़ गए। त्रेता का विक्षेप और सतगुरू में आवरण के पर्दे पहले से ही थे। अब तीनों पर्दों ने आत्मा को ढ़क लिया। ये पर्दे कैसे दूर हों?

द्वापर में दान पुण्य करने से दूर हुआ करते थे। जब लोग दान पुण्य करते थे तो पर्दे हट जाते थे। पर अब चलते—चलते कलयुग आ गया और इस कलयुग में जीव की इतनी कमजोर हालत हो गई कि प्राणायाम भी हम नहीं कर सकते हैं। क्या यहां कोई प्राणायाम करने वाला है? आपको सुरत शब्द के योगी मिल जाएंगे। अगर कोई प्राणायाम का करने वाला है तो यह दूसरी ही बात है क्योंकि आजकल लाठी से लड़ाई करने वाले भी तो नहीं हैं। हम पाली रहते थे। तब लाठी चलाना सीखा करते थे। अब कोई भी लड़ाई लाठी से नहीं लड़ी जाती है। लाठी जाने के बाद तलवार आई थी। तलवार जाने के बाद बंदूक आ गई। बंदूक भी चली गई तो गोले आ गए। अब तो और ही हथियार चल पड़े हैं। आज अगर लाठी या तलवार से लड़ाई करता है तो उसको मूर्ख ही कहा जाएगा। आज तो गोलियों की जरूरत नहीं है और ही कुछ कर लेते है और सब कुछ छोड़ कर चले जाते हैं। अपने आप ही कुछ न कुछ घटना घटती रहती है। सो अब जो कलयुग आ गया है, इस युग में तो सुरत—शब्द का योग ही है। इसको सहज योग कहते हैं। इस सहज योग में न घर छोड़ना पड़ता है और न बच्चे ही छोड़ने हैं। बस केवल भैड़े कर्म छोड़ने पड़ते हैं। इन भैड़े कर्मों को छोड़ते ही सुरत अपने घर चली जाती है। सो आपको मैं यह बता रहा था कि इस कलियुग में क्या करना है। पहले युगों में तो मल विक्षेप आवरण के पर्दों को दूर करने के लिए विवेक, अष्टांग योग और तीसरे में धर्म पुण्य—दान आदि थे। अब यह

चौथा युग कलयुग आ गया। इसमें क्या है?

कलयुग केवल नाम आधारा। सुमर—सुमर नर हो गए पारा।।

नाम भी कौन सा होता है। नाम तो वही धुनात्मक है। वर्णात्मक नाम से भी फायदा होता है। धुनात्मक नाम को महात्मा लोग परा—विद्या भी कहते हैं। जब तक तुम उस परा विद्या को ही नहीं समझते तब तक कभी अपने घर नहीं जा सकते और न ही पूरी शांति ही मिल सकती है। सो इसके लिए एक नाम का ही साधन है। वह नाम भी कौन सा है। नाम तो सारी दुनिया ही जपती है उसे धुनात्मक नाम कहते हैं। वह नाम सारी दुनिया की जान है। वह सारी दुनिया का सहारा है। वर्णात्मक नाम तो धुनात्मक में से ही निकला हुआ है। जब यह वर्णात्मक भी धुनात्मक में समा जाएगा तब तुम्हें धुनात्मक पता चल जाएगा। सो धुनात्मक का सुमरन ध्यान वही करते हैं जो उस उनमुनी अवस्था से आगे चले जाते हैं और आगे जाकर उस उनमुनी अवस्था को भूल जाते हैं। फिर वे उस जगह पर पहुंच जाते हैं जैसा कि हम शब्द में बताते हैं—

सुख दुख दोनों नहीं म्हारी हेली! निगुणयों के देश।

वह स्थान निर्गुण का है। उसे निर्गुण क्यों कहते हैं, क्योंकि उसमें कोई ऐब नहीं है। उसको कहते हैं, दयाल पद और उस दयाल पद में जाने पर तो कितना ही पापी और कोई भी दुष्ट क्यों न हो वहां उस पर दयाल दया कर देता है। वह दयाल कौन है? ये आपने सुना है राधास्वामी दयाल ही दयाल है और कलयुग के फंद काटने के लिए यह राधास्वामी नाम ही दयाल है। इस नाम के बिना न तो मुक्ति कभी हुई है और न ही होगी। मैं इस मोक्ष की ही बातें कर रहा हूं। राधास्वामी नाम किसे कहते हैं? सुरत—शब्द के योग को ही राधास्वामी नाम कहा जाता है। हम सुरत शब्द की कमाई को सहज योग भी कहते हैं। इस सहज योग के बिना न तो

किसी की मुक्ति हुई है और न ही होगी। सो जो दुख सुख दोनों से ही परे परमपद है उसमें पहुंचने की कोशिश करो। इसमें अटकने की कोशिश मत करो। ये दोनों रहणियां तो सतखंड से नीचे ही रह जाती हैं और ये स्वर्ग—वैंकुठ का मुंह दिखाकर वापिस ले आती हैं। यही मैंने उस भौमिका वाले की बातें बताई हैं। उसकी भी उनमुनी ही रहणी होती है। मैंने दो महात्माओं को देखा था। एक तो तिगड़ाना में था और एक कैरू में सातवीं भौमिका का था। पर वे वहां जाकर रूक जाते हैं। क्योंकि गुरू उनकी मदद नहीं करता। मैं उन महापुरुषों का खंडन नहीं करता। उन्होंने कमाई की पर कमाई करके स्वयं को ही तारा। इसी को कहते हैं—

सिद्ध तारै तन आपना, साधु तारै खंड।
पूरा सतगुरू जाणिए जो तारै ब्रह्मंड।।

वे किसी के सतगुरू नहीं बने क्योंकि वे उनमुनी अवस्था के थे। उनमुनी अवस्था वाला ऊपर की मंजिलों का वर्णन नहीं कर सकता। शब्दों का वर्णन नहीं कर सकता। वह तो कोई भी वर्णन नहीं कर सकता। जैसे एक शराबी, शराब पीकर पागल हो जाता है, वह अपनी कोई भी बात तसल्ली बख्श नहीं बता सकता। सो ही लोग कह देते हैं कि पागल से भी क्या बातें करते हो? हम उनको पागल नहीं कहते हैं जो संतमत में जाते हैं। वे ब्रह्म में लीन होकर उनमुनी अवस्था में चले जाते हैं। वे मुंह से जो कह देते हैं वही पूरा हो जाता है। पर वह औरों का उद्धार नहीं कर सकते हैं। आप बुरा न मानना। मेरी बातों का सार समझना अच्छी तरह से। वे उद्धार क्यों नहीं कर सकते हैं? क्योंकि वे तो सिद्ध होते हैं वे तो अपना ही उद्धार कर सकते हैं। आप बताओ किसी भी सिद्ध ने किसी का उद्धार किया हो तो? वे चले गए और लोग उनको पूजते रहते हैं। उनकी रेडिएसन काम करती है। पर संत आते हैं वे सातवीं भौमिका से आगे चले जाते हैं। उस भौमिका में क्या

मिलता है? उस भौमिका में शांति प्राप्त करके परम पद में चला जाता है। उसे सतखंड भी कह देते हैं। उसका जन्म मरण नहीं होता है। इसीलिए सतखंड की महिमा की जाती है। इस भौमका का भी महत्व है उसमें तो यही मिलता है कि घोड़ा और जोड़ा दे दे राजा। उसने पूछा—ये कब की बातें थी? उसने बताया कि उस राजा का यह नाम था। उसने कहा कि मैं तो उसका पोता हूं। इतने दिन गुजर चुके हैं तो क्या उसकी यह भक्ति बन गई? नहीं भक्ति नहीं बनी। उनकी वासना तो ज्यों की त्यों ही रह जाती है। मन की वासना तो तभी मिटेगी जब तुम सतगुरू के नाम का सुमरन करते हो। उस नाम की कमाई करोगे तो मन की वासना मिट जाएगी। यह मन की वासना ही घर भेजती है। जन्म लेने की आश रहती है तो हमें वहीं आना पड़ता है। मैं तो सत्संग समाप्त करना चाहता था पर और बातें निकल आई हैं। कोई यहां वेदांती भी बैठा होगा? हो सकता है कि उसके दिल में कोई शंका उठ गई हो कि क्या यह भी मन की बातें हैं। मन कोई छोटी वस्तु तो है नहीं। जैसे तीन लोक में काल महाराज का राज है इसी तरह शरीर भी एक लोक है। ये भी एक बस्ती है। इसमें मन का राज है। मन को काबू में करने के लिए एक नाम की कमाई ही है और कोई साधन नहीं है। इस मन ने तो बड़े—बड़े ऋषि—मुनियों को नचा दिया है। इस मन ने श्रंगी ऋषि की भंगी बना दी। पारासर की दुर्दशा कर दी। बंदर का मुंह भी इसने ही बनाया बल्कि और भी न्यारा खेल आपने सुना होगा जो इसने उनके साथ किया था? उनकी बड़ी—बड़ी दुर्दशाएं कीं और उनको इस मन ने ठग लिया। कहते हैं—

साधो ! मन है बड़ा जालम।
जिसका पड़ा वास्ता मन से उसी को है मालम।।

ये मन बड़ा भारी है। नानक साहब कहते हैं—

नानक! मन जीते जुग जीत।

जो मन को काबू में कर लेता है वह युग जीत लेता है। कबीर साहब कहते हैं—

कहैं कबीर मन मानिया।
मन मानिया तो हरी जानिया।

मन को जीतने वाला तो हरी बन जाता है। ये मन ही तो चक्कर कटाता रहता है। ऐ सनातनियों ! ख्याल करो। मैं तुम्हारी ही तो बातें बताता हूं। दूसरों की तो नहीं कहता। तुम्हारे शास्त्रों में ये लिखा है—"जिसके प्राण गुदा से निकलते हैं, तो वह बहुत ही नीची योनि में जाता है। जिसके मूत्रद्वार से प्राण निकलते हैं वह उससे थोड़ी ऊंची पर गंदी योनि में जाता है। जिसके प्राण मुंह में से निकलते हैं वह भी गंदी योनि में जाता है पर मूत्रद्वार वाले से थोड़ी अच्छी योनि में जाता है। जिसके आंखों से प्राण जाते हैं तो आप लोग ही कह देते हो कि अच्छी जगह गया और ये आदमी की योनि में जाएगा। ये ठीक है पर जिसे कानों से प्राण जाते हैं तो उसको नीची योनि मिलेगी और जिसके नाक के मार्ग से प्राण जाते हैं वह और भी नीची योनि में जाता है। जिसके मुंह के मार्ग से प्राण निकलते हैं तो कहते हैं कि वह नाक मार्ग से प्राण जाने वाले से भी नीची योनि में जाता है। ये बातें मैंने तुम्हारे शास्त्रों की अपनी छोटी उम्र में सुनी थी पर तुम इन बातों से परिचित नहीं हो। अगर कोई सच्चा प्रेमी मिल जाता तो तसल्ली करवा देता। आंखों से नीचे—नीचे तो काल का ही पसारा रह जाता है। संत कहते हैं कि ऊपर चलो, छठे चक्कर से अभ्यास शुरू करो। वहां से अगर तुम्हारी सुरत चोला छुटने के बाद में चली गई तो लख चौरासी से बच जाओगे। ये बातें जैसे मैंने पहले बताई हैं किसी के दिमाग में आई होंगी—हम चौरासी से कैसे बच जाएंगे? मेरे दिमाग में आई इसी लिए मैं प्रश्न करके उत्तर दे देता हूं कि उनका प्राण नीचे से

क्यों निकला? उनके खोटे कर्म करने के कारण ही तो उनके प्राण यहां से गए हैं। यह बिल्कुल ठीक है। कोई ज्यादा विषयी आदमी होता है उसके मन की बैठक (जनन) इन्द्री पर रहती है। सो उसका जीव इसी मार्ग से जाएगा। कई जीभ के बड़े गुलाम होते हैं, मरते वक्त उनकी जीभ पर ही मन की बैठक रहती है। वहीं से उसके प्राण निकलेंगे। मैं गलत नहीं कहता हूं। कोई पूछना चाहे तो बोल भी लेना। किसी को देखने ताकने के लिए मन की बैठक आंखों पर रह जाती है तो उनका प्राण आंखों से निकलता है। मन की बैठक सुनने के लिए कानों पर ही ठहर गयी है तो कानों से ही प्राण निकलेगा। संत इसी बात को समझाते हैं कि उस मन की बैठक छठे चक्कर पर रखे इस स्थान पर। यहीं पर अपने विचार रखो। जब मन की बैठक ही यहां रहेगी तो नीचे तो ये मन पिंडी ही है और उससे ऊपर ब्रह्मंडी बन जाएगा। उसके ऊपर जाकर पारब्रह्म में लीन हो जाएगा। इसके तीन भाग हैं। जब ये इस स्थान के नीचे आता है तो पिंडी बन जाता है। ऊपर जाकर ब्रह्मंडी बन जाता है। ये मन की गति है। आपने सुना है—

पहले यह मन काग था करता जीवन घात।
अब यह हंसा भया चुग—चुग मोती खात।।

सो मन पिंड में उतरने पर पिंडी, उससे ऊपर जाकर ब्रह्मंडी बनता है और ब्रह्मंडी से ऊपर जाकर यह पार पारब्रह्म में भी चला जाता है। यह अपनी चाल बदलता रहता है। यह मन दुश्मन भी है और मित्र भी है। अगर इसको विषयों में फंसा दोगे तो हमारा दुश्मन बन जाएगा। इसी मन को विषयों से हटाकर यदि सुमरन, ध्यान में लगा दोगे तो ये मित्र बन जाएगा। इतनी बातें मैंने मन के बारे में आप लोगों को बताई हैं। सो अपने मन की निंदा न करो। तुम अपनी चाल की निंदा किया करो। अपने गंदे विचारों को मोड़ा करो। अपने विचार ऊंचे रखा करो। मैंने आपको सनातन धर्म की

बातें बताई हैं। परन्तु सनातनी ऐसे करते तो नहीं हैं। इसलिए फंस जाते हैं। सनातनी तो अपना काम करते रहते हैं और फिर ये भी कह देते हैं—

जहां आशा, वहीं बासा।

किसकी आशा? हमारे अंतर में आश करने वाला कौन है? यह मन है और इसकी जहां भी आस होगी वहीं जाना पड़ेगा। राजा जड़ भरत का प्यार हिरण से था। उसे हिरण ही का जन्म लेना पड़ा। ऐसा तुम्हारी भागवत् कहती है। सो मैं तुम्हारी लाठी तुम्हें मारता हूं और बता देता हूं। सो इस मन को ऊंचा रखा करो। इस मन को भडुवा मत बनाओ। इसे राजा बनाओ और ऊंचा ले जाओ। यह मन कोई छोटी चीज नहीं है। बड़े—बड़े ऋषि—मुनि इस मन के कारण चक्कर काट गए। यही मन बदलकर सतखंड में ले जाता है। ऐसा भी कहते हैं कि मन एक ही हैं मन दो नहीं हैं। आगे चलकर इसकी चाल बदल जाती है। जो मन उत्पात करता था, वही पवित्र बन कर आगे ले जाता है। अतः मन की चाल बदलना चाहिए, इशारे में मैंने पहले बता भी दिया। पूर्ण सतगुरू की शरण लेनी चाहिए। उनमुनी अवस्था में मुक्ति नहीं है कभी कोई इसी से बंधकर बैठ जाए। यह कहा है कि—

आंख न मूंदू, कान न रूंधूं काया कष्ट न धारूं।
खुले नैन मैं हंस—हंस देखूं, सुन्दर रूप निहारूं।।

यह उनमुनी अवस्था की स्थिति है। पर यह कब होता है? अगर यह अवस्था आती है तो कोई बात नहीं।

शब्द निरंतर मनुवा राचा मलिन वासना त्यागी।

जब शब्द की धुनी सुनोगे तो सारी मलिन वासना दूर हो जाएगी। वही पहले कह दिया कि **धुन सुनकर मन समझाई।**

इसमें यह कह दिया कि मलिन वासना त्याग दी। शब्द की धुनी सुनकर। वह शब्द ही सारी दुनिया की जान है। वह कर्ता है।

उस शब्द का भेदी वही होता है जो उन मंजिलों का वाकिफकार हो। इसलिए मैंने थोड़ा शब्द का वर्णन किया। पूरा वर्णन नहीं किया। क्यों? क्योंकि एक घंटा हो गया होगा। सो एक घंटा आपको सत्संग सुना दिया है। मेरा सत्संग अच्छा लगे तो आना। नहीं तो मेरे सत्संग में न आना। क्योंकि जिसके सत्संग में शांति नहीं मिलती है तो कभी मत जाओ और जिसके सत्संग में शांति मिलती है तो जाओ। पर यह बात बड़ी बारीक है। मैं बताता हूं कि अगर तुम इंद्रियों के विषय में पड़े हुए हो तो संतों के सत्संग में शांति नहीं मिलेगी अगर तुम्हारा मन इंद्रियों के घाट पर है तो। ये इंद्रियां कौन सी हैं? गुदा भी इन्द्री है। पेशाब करते हैं ये भी इंद्रिय है। जिव्हा, कान, नासिका और आंख सभी इंद्रियां है। इन इंद्रियों के घाट पर तुम्हारी बैठक है तो सतगुरू की बातें प्यारी नहीं लगेंगी और तुम उसको समझ भी नहीं सकते। संतों का सत्संग उन्हीं को प्यारा लगेगा जिनके मन की बैठक इन इंद्रियों के घाट से आगे चली जाती है। उसी को सत्संग प्यारा लगता है और वही अपना काम करके जाता है। गुरू महाराज की दया से मैंने तुम्हे प्रमाण देकर सत्संग करा दिया है। अब तुम यह भी कहोगे कि हमने उन दोनों सत्संगों से भिन्न सत्संग सुन लिया है। यह कोई भिन्न नहीं है। इसे मैं कहीं दूर से नहीं लाया हूं। सतगुरू जब जैसी रील चढ़ा देता है तो उसे मैं आप लोगों को दिखा देता हूं। मेरा इसमें कोई अहसान नहीं है। यह मेरे सतगुरू की दया है। उन की ही मेहरबानी है। मैंने सीधी सादी बातें कही हैं।

ऐ प्रेमियो, सत्संगियो ! इन धोखे बाजों से बचा करो। जो दूसरे को ही धोखा देता है तो वह आप भी नहीं तिरेगा। वह तो अपनी ही आत्मा को धोखा देता है। मैं अगर आपसे धोखा बाजी करता हूं तो मैं आपका कुछ नहीं बिगाड़ता। उससे तो मेरा ही बिगड़ता है। मेरी आत्मा मलिन हो जाती है जो सतगुरू बन कर

अपने चेले चेलियों से धोखा करता है, बेटा—बेटियों से मां—बाप से धोखा करता है वह अपनी ही आत्मा को मलिन कर लेता। वह कभी भी अपने घर नहीं पहुंच सकता है। चाहे वह बीस—बीस घंटे अभ्यास करता रहे। उसका मन नहीं टिकेगा। मन तो तभी टिकेगा—

विषयन से जो रहे उदासा।
परमार्थ की जा मन आसा।।
धन सन्तान प्रीत नहीं जा के।
खोजत फिरै साध गुरू जा के।।

इस मन को शांति देनी है तो विषयों से उदास रहो और अपना काम करना सीखो। विषय तो औलाद के लिए ही किए जाते हैं। अपनी जिन्दगी बरबाद करने के लिए नहीं। अगर ये बातें समझ लो तो तुम्हारी औलाद भी शेर हो जाएगी। अगर ये बातें समझ लोगे तो अपनी जिन्दगी में तलहका मचा दोगे। यह शरीर भी एक संसार है, इसमें तहलका मचाकर अपनी सुरत को ऊपर ले जाओगे। यह करणी का मार्ग है। बातों का मार्ग नहीं है। स्वामी जी कहते हैं—

यह करणी का भेद है नहीं बुद्धि विचार।
बुद्धि छोड़ करनी करै, तब पावै कुछ सार।।

इतनी देर मैंने आपको सत्संग दे दिया और यदि किसी भाई के दिल में कोई प्रश्न हो तो पूछ सकता है। बाद में भी कोई शंका हो तो मेरे पास आ जाना। पर मैं जिज्ञासु से बात करता हूं। शराबी, शराबी से बात करता है। कबाबी कबाबी से बात करता है विषयी—विकारी, विषयी—विकारी से ही बात करता है। योगी, योगी से बात करता है। संत मत वाला संतमत वालों से ही बात करता है। उनकी तसल्ली हो जाती है। सो जो इन विषय—विकारों का कीड़ा है और हर वक्त खोटे घड़ता है उसको मुझ से प्रश्न करने की जरूरत नहीं है। वह पहले अपनी ही आत्मा से प्रश्न करे।

अपनी आत्मा को ही पवित्र बनाओ। अपनी आत्मा से प्रश्न करके कि तू मलिन है या पवित्र है। अगर वह कह दे कि मैं मलिन हूं तो पहले उसे ही पवित्र बनाने की कोशिश करो फिर मेरे पास आ जाना। फिर अगर मुझ से बात पूछोगे तो मैं जानता हूं उतनी बता दूंगा। मैं पूछ भी लूंगा। वास्तव में पूछने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी। क्यों नहीं?

मिशाल याद आ गई। एक सुनार था। बड़ा पैसे वाला था। वह गुजर गया। उसके पीछे एक लड़का रह गया। उसकी पत्नी रह गई। लड़का पढ़ लिख कर काबिल हो गया। उसने कहा—मां मैं भी दुकान करना चाहता हूं। उसकी मां ने कहा—हां बेटा ! तू अपने चाचा से बात कर ले अगर वह सांझे की दुकान कर लेता है तो। वह चाचा के पास गया। उसने कहा—चाचा! मैं दुकान करना चाहता हूं। उसने कहा—करले बेटा ! मैं तो खुद यह चाहता था कि अपने पांव पर खड़ा हो जाए। उसने पूछा—दुकान कहां करूं? मैं आपके साझे में कर लूंगा। उसने कहा—बेटा ! मेरे साझे में कर ले। उसने अपने साझे में दुकान करवा ली। उसने कहा—तुझे आधा पैसा तो देना पड़ेगा। लड़के ने कहा—ठीक है मेरी मां के पास धन बहुत है दे दूंगा। लड़के ने अपनी मां से यह बात कही। उसने पैसा दे दिया। एक कुल्हड़ी (मिट्टी की हांडी) लालों की भरी थी वे दे दिए कि ले जा बेटा। वो एक लाल लेकर गया। उसके चाचा ने कहा—यही एक लाल है या और भी है। उसने कहा—चाचा एक हांडी भरी है। उसने कहा—दिखा दो। वह अपने चाचा को लेकर गया। उसने वे लाल देखे। उसने वह लाल वापिस दे दिया। उसने कहा—ऐसा न हो कि धोखा खा जाए। इसे अच्छी तरह रख लेगी। मेरे पास पैसे बहुत हैं। मैं आपका काम चला दूंगा। जब तेरा काम चल जाए और न्यारी दुकान कर लेना। मैं सामान खुद ले आऊंगा। उसने कहा—अच्छा चाचा। लड़का खुश हो गया कि

चाचा ने बड़ी मेहर की। उसने अपने साझे में उसका काम करवा दिया। लड़का साल—दो साल में पक्का जौहरी बन गया। अब उसके चाचा ने कहा—अब तू अपनी न्यारी दुकान कर सकता है। उसने कहा—कर लूंगा चाचा। उसने अपनी न्यारी दुकान कर ली। उसने अपनी मां से कहा कि मां! अब वे लाल मुझे दे दे। मैं भी अपनी दुकान में सामान रख लूंगा। अब तक तो मैंने अपने चाचा का पैसा ही बरता है। उसने कहा—ले जा बेटा। उसने वह लाल निकाल कर दे दिया। लड़के ने कहा—मां यह तो नकली है। अब उसने दूसरा और दिया। लड़के ने कहा—यह भी नकली है। अब वह चार—पांच लाई। फिर वह हांडी ही लाकर रख दी और कहा—देख ले। उस लड़के ने कहा—मां ये तो सारे ही नकली हैं। मां ने आश्चर्य से कहा—क्या सारे ही नकली हैं? उसने कहा—हां। उसकी मां ने कहा—तेरे चाचा ने तो उस दिन नहीं बताया कि ये नकली हैं। उस लड़के ने कहा—मैं अपने चाचा के पास जाता हूं। वह गया और उसने कहा—चाचा ! आपने मेरे साथ बड़ा धोखा किया। उसके चाचा ने पूछा—किस बात का धोखा किया बेटा? लड़के ने कहा—जो लाल मेरी मां ने दिए थे, वे तो सारे ही नकली थे। आपने क्यों नही बता दिए कि ये तो नकली हैं? उसने कहा—बेटा बात तो तेरी ठीक है। उस दिन भी वे नकली ही थे पर उस दिन अगर मैं कह देता कि ये नकली हैं तो तुम मुझे बेईमान ही समझते। सोचते, हमारा धन हड़पने के लिए ही नकली बताता है। पर मैंने आपको काम करवा दिया। ऐसा बना दिया है कि तू हीरे मोतियों को परखने लग गया है। अब तूने अपने आप ही नकली बता दिए।

ऐ प्रेमियो ! अगर तुम अभ्यास करके और ऐबों को छोड़ कर जैसा मैंने बताया वैसे अभ्यास करके आओगे तो तुम्हें प्रश्न करने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। तुम भी खुद ही सोच जाआगे कि

तुम्हारे अन्तर में तो नकली हीरे भरे पड़े थे। नकली हीरे निकल कर जब असली आते जाएंगे तो तुम खुद ही सोच जाओगे कि हम भी नकली थे। अब असली बन गए हैं। यदि अपनी आत्मा को धोखा देते हो तो तुम भी नकली हो। जब अपनी आत्मा को धोखा देना बंद कर दोगे उसी दिन असली बन जाओगे। सो मैं किसी डेरे से नहीं बंधा हूं। मैं यहां का ट्रस्टी नहीं हूं। अगर ये धोखा करते हैं तो चाचा साधु राम हरों की मर्जी है। मैंने तो कह दिया है—मेरा कुछ नहीं है। मैं तो अपना भजन करता हूं। यही दिनोद की बातें हैं। सतरह डेरे हैं या कितने हैं मैं किसी से बंधा नहीं हूं। मैं तो सत्संग करता हूं और सत्संग करके आ जाता हूं। पर यह भी बात है कि मुझे चार पैसे भी दे देते हैं। मैं जेब में डाल लेता हूं। पर पैसे देख कर कह देता हूं कि इतने पैसे मेरे पास आ गए हैं। इनको लगा लो। ये तुम्हारे ही हैं। मेरे तो काम के नहीं है। मैंने करना भी क्या है? इसीलिए बच जाता हूं। मेरे सतगुरू की अपार दया थी।

ऐ सत्संगियो ! जिनको पूर्ण सतगुरू मिल जाता वे काल माया से बच जाते हैं। पर कब बचोगे? पूर्ण सतगुरू की बातों पर विश्वास करागे तो। मेरे पास एक प्रेमी नाम लेकर गया। वह सरल का था। वह बहुत अच्छा प्रेमी था। मैंने एक दिन उससे पूछा—अभ्यास के बारे में सुना। उसने कहा—ठीक है जी। मैंने पूछा कि तू नाम कैसे लेता है? उसने कहा—आधी देर तक तो राम—राम करता हूं और आधी देर राधास्वामी करता हूं। मैंने कहा—यूं किस तरह? उसने कहा—अगर राम बड़ा है तो आधी देर तक राम—राम करता हूं। फिर तो राम से ही बेड़ा पार हो जाएगा। और राधास्वामी बड़ा है तो आधी देर राधास्वामी—राधास्वामी भी रटता हूं। मैंने तो ऐसा कर रखा है। सो जिसको गुरू के वचन पर विश्वास ही नहीं है वह भक्ति क्या करेगा? जो गुरू वचन पर डट जाता है उसका सारा जीवन सफल हो जाता है। उसका भाव ही मुनाफा देता है।

जब हमारा विश्वास ही नहीं है तो क्या करेंगे? यह भी नहीं समझा आज तक कि राम की धुनी कहां है और ओ३म् की धुनी कहां है। यह धुनी है और यह नाम वर्णात्मक है। राधास्वामी की धुनी कहां होती है। जिसका वर्णन करके उपदेश दिया जाता है। मैंने पूछा—क्या तुझे ये पता नहीं लगा? उसने कहा—पता तो लगा था। मैंने पूछा—फिर भ्रम क्यों रह गया? इसका मतलब तेरा तेरे गुरू पर ही विश्वास नहीं है। सो तुम कच्चे हो। जो पतिव्रता स्त्री अपने पति पर ही विश्वास नहीं करती है तो वह व्यभिचारणी होती है। जब पूर्ण संत सतगुरू मिल जाते हैं और जो पूर्ण पुरुष पर भी विश्वास नहीं करते हैं तो वे कभी भी तिरते नहीं है। खाली धोखा ही धोखा है। कई लोग कहते हैं कि चरणों में रखो। मेरे गुरू महाराज तो खुदा हैं और तुम उस खुदा से भी धोखा करते हो। तुम उसके आगे कौन सा धोखा करते हो? तुम अपने स्वार्थ के लिए पता नहीं उनके आगे कितनी झूठ बोल देते हो। मैं अब किसका नाम लूं? नाम अगर ले दूंगा तो वह भागने की कोशिश करेंगे यहां से। अपने स्वार्थ के लिए झूठ बोलते हो और मेरे पास आकर कहते हैं कि महाराज तो जानी जान हैं। अरे महाराज तो जानी जान हैं। पर तू उनसे धोखा क्यों करता है? तुम गुरू से क्या डरोगे तुम तो राम से भी धोखा करते हो। जैसे पार्वती ने शिव जी को धोखा दे दिया। शिव जी ने पूछा कि कहां गई थी? वह राम के पास परीक्षा करने के लिए गई थी। राम ने जाते ही कहा कि माता जी सीता बन कर चली आई। माता जी! आपने भोले नाथ को कहां पर छोड़ दिया? वह लज्जित होकर वापिस आ गई। लंबी मिसाल है सुनी होगी। लोगो के आगे तो तुम कहते हो कि मेरा गुरू पूरा है पर आप खुद धोखा दे देते हो। चीज के लिए या और किसी काम के लिए। पूरा कैसे हुआ? यदि पूरा है तो तुम बड़े जुल्मी हो। राम को भी धोखा देते हो। खुदा को भी धोखा वे देते हो। फिर किस तरह

तिरोगे? सो जो परमात्मा को धोखा नहीं देता, उसके लिए पत्थर की मूर्ति भी अपना रूप धारण करके उसे खुश कर देती है। आप कहोगे कि अब तो खंडन कर रहे थे। नहीं, मैंने खंडन नहीं किया। ये मैं विश्वास की बातें ही कह रहा था।

निश्चय बौवे नेड़ै निपजे कटे काल जम फांसी।
मन मेरा होज्या नगरिया रा वासी।।

निश्चय नहीं तो कुछ नहीं होगा। निश्चय रखो। विश्वास से काम करो। पर मेरी बातें तुम्हारे दिमाग में नहीं घुसी हैं। अगर एक दो के भी दिमाग के घुस गई तो भी मेरा जीवन सफल है। मेरे विचार कहते हैं कि काफी बातें तुमने नहीं सुनी हैं। ये ऊंची बातें थीं। अब भी तुम अमल नहीं करोगे तो गिर जाओगे।

अमल करे सोई पावै अवधू अमल करै सोई पावे।
बिना अमल करे दर—दर धक्के खावै।।

जब अमल नहीं करोगे तो दुख पाओगे। दर—दर के धक्के। मतलब लख चौरासी में आना पड़ेगा। लख चौरासी कितनी बताई? तुलसी दास तो कहते हैं—

नौ लाख जल के जीव हैं, दस लाख पखेंरू जान।
एकादश कीट भंग हैं, स्थावर बीस बखान।।
तीस लाख पशु योनि है, चार लाख नर होई।
इनमें जो राम भजे, तुलसी धन है सोई।।

जो अपने गुरू के नाम का सुमरन भजन करता है वह तुम्हें ले जाएगा। उस नाम से ही गुरू का रूप प्रगट होगा। तुम नाम तो और जपते हो फिर गुरू का रूप प्रगट करना चाहते हो, तो कभी भी प्रगट नहीं होगा। भैंस का दूध देखकर भैंस का रूप प्रगट हो जाएगा। गाए के दूध से गाय का रूप प्रगट हो जाएगा। ऐसी मिशाल है। जो सतगुरू नाम बताता है उस नाम को रटोगे तो गुरू का रूप ही प्रगट होकर तुम्हारी मदद करेगा। अगर दूसरा रटोगे तो दूसरा ही रूप आएगा। सो गुरू मंत्र नवधा भक्ति में पहला माना गया है और इस नाम का जाप करना यही है। सो अपना

सतगुरु प्रसाद

(परम सन्त हुजूर कंवर जी महाराज)

कुण्डलियां

कल की बात हाथ नहीं आनी, बीत गई सो बीत गई।
आगे की सुध सोच विचारो, ये सतगुरु ने सीख दई।
सत्संग, सेवा और करो बन्दगी, यही बात है नेक सही।
"कँवर" कद्र करे वक्त की, ये अवसर मिलता फेर नहीं।

बुद्धिबल चतुराई करते, ये नहीं काम तुम्हारे आएगी।
धर्मराज की लगै कचहरी, जहाँ तेरी फाइल खोली जाएगी।
अपील दलील कोई ना चाले, वहाँ कर्म गवाही पाएगी।
दास "कँवर" कहै नाम कमाई, कभी क्था ना जाएगी।

कोई किसी के साथ न आया, ना कोई किसी के साथ चले।
छोड़ छोड़ के सबको जाना, नहीं किसी की पेश चले।
काल शिकारी बड़ा बली है, उसकी चक्की दिन-रात चले।
दास "कँवर" कहैं लाख यत्न कर, होनी हो सो नहीं टले।

राधास्वामी संत संदेश | 15 नवम्बर, 2003 | अंक : 79

ध्यानाकर्षण बिन्दु

सभी सत्संगियों को स्मरण कराया जाता है कि प्रत्येक आश्रम से सत्संगियों की दिनोद धाम में सेवा की बारी आती है। अतः आप सभी अपनी-2 शाखा में जाकर अपनी सेवा का समय पूछें और निश्चित समय पर धाम में सेवा तथा दर्शन लाभ उठायें।

अक्तूबर मास के लिए सेवा कार्यक्रम

5	कोसली	10 नवम्बर – 16 नवम्बर
6	लालपुर	17 नवम्बर – 23 नवम्बर
23	नजफगढ़	24 नवम्बर – 7 दिसम्बर
24	हरसाना	8 दिसम्बर – 14 दिसम्बर
26	सिचावली	15 दिसम्बर – 21 दिसम्बर
27	थिरपाली	22 दिसम्बर – 28 दिसम्बर

जीवन दर्शन

दुनिया में हर जगह, हर घटना, हर दृश्य और हर बात में चमत्कार है। वह प्रेम स्वरूपी मूर्ति काम कर रही है। इसके रंग में मस्त रहो। नित्य प्रति ऊंचे चढ़ने का साधन करो। ईश्वर से चित्त की दृढ़ता, आंखों की दृष्टि, बुद्धि की पहुंच के लिये प्रार्थना करते रहो। जीवन के खेलों को देखकर उदास मत हो। यह दुख जो तुमको दिये जा रहे हैं मसलहत और मौज में हैं। परमात्मा तुमको प्रेम करता है। वह प्रेममूर्ति है। वह तुम्हारा मित्र है। इसकी देन को तुम स्वीकार करो।

–महर्षि शिवव्रत लाल जी

प्रश्न-उत्तर

महर्षि शिवव्रत लाल जी

प्रश्न-क्या अभ्यासी और गैर अभ्यासी मरते समय एक ही स्थान को जाते हैं या इसमे अन्तर है।

उत्तर-नियम तो एक ही है, चाहे अभ्यासी हो या गैर अभ्यासी। मरते समय दोनों की सुरत एक ही रास्ते की और आकर्षित होगी अन्तर केवल इतना होगा कि अभ्यासी ने जिस स्थान को तय कर लिया है, वहां पहुंचकर उसकी मत्यु होगी और वह मरने के बाद ऊंचे स्थानों की और चला जायेगा। जो अभ्यासी नहीं है, उसकी सुरत त्रिकुटी (ओ३म) के स्थान तक पहुंच कर फिर नीचे की और आकर्षित होगी और आंख, नाक, कान, मुंह के मार्ग से प्राण निकलेगा या निचली इन्द्रियों या गुदा चक्र की राह से बाहर निकलेगा।

जिस जिस आदमी ने जिस जिस इन्द्री का ध्यान दढ़ कर रखा है, उसी की राह से निकलकर उसी प्रकार की योनि धारण करेगी। जिसको मत्यु के दश्य देखने का अवसर मिला है वह गौर करके इसकी सच्चाई को समझ सकता है। ऐसी घटनायें सबके घरों में हुआ करती हैं।

इस दुनिया में यदि स्वाद लेने में किसी ने रुचि रखी है तो उसकी सुरत ऊपर चढ़कर जिभ्या की राह से निकलेगी। जिभ्या खिंचकर के मरते समय बाहर निकल पड़ेगी। यदि किसी ने नजारा बाजी को दिल दे रखा है तो इसका जीव आंख की राह से निकलेगा। यदि किसी ने काम भोग को पसन्द कर रखा है तो उसका प्राण लिंगेन्द्रिय के मार्ग से बाहर आयेगा और भी इसी प्रकार समझ लो। जिस जिस बात की आदत पड़ गई है, उसे उसी–उसी तरह के शरीर में आकर नये जन्म धारण करने पड़ेंगे। इन सबकी आदत भी तो एक प्रकार के लगातार अभ्यास ही से बनी है। उनका संस्कार फुरता हुआ वैसा ही तमाशा दिखायेगा। प्रकति का यह नियम अटल है। हर एक बुद्धिमान इस सच्चाई को समझ सकता है।

अनमोल वचन

- ज्योति-स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति के यत्न को तज कर मांस खाना हलाल-खोरी नहीं, बल्कि हराम-खोरी है। सभी जीव साईं के प्यारे हैं। *-कबीर साहिब*
- उस मनुष्य में दया की भावना कैसे आ सकती है जो अपना मांस बढ़ाने के लिये दूसरे जीव-जन्तुओं का मांस खाता है। *-संत तिरुवल्लवर*
- अगर तुम भक्ति नहीं कर सकते तो अपने विचार अच्छे रखो। जिसके विचार पवित्र हैं, ख्याल अच्छे हैं वह कभी न कभी सन्तों की शरण में जाकर तिर जायेगा। *-परमसन्त ताराचन्द जी महाराज*
- मन में पशुओं के प्रति दया और करुणा के भाव रखो। जो पशु-पक्षियों की हत्या करता है, वह निर्दयी है, चाण्डाल है। *-भगवान बुद्ध*
- जानवरों को बांधाना, दुख पहुंचाना, मारना और उन पर बहुत भार लादना भी महापाप गिना जाता है। *-भगवान महाबीर*

ज्ञान-सार

- श्रेष्ठ कर्म वही है, जिससे लोगों का उपकार हो।
- विकारहीन मन ही तनको स्वस्थ रख सकता है।
- आश्चर्य! लोग जीवन बढ़ाना चाहते हैं, सुधारना नहीं।
- मन सफेद कपड़ा है, जिस रंग में डुबाओगे उसी रंग का हो जायेगा।
- संसार में रहकर जो साधन कर सके, यथार्थतः वही वीर पुरुष है।

स्वास्थ्य स्तम्भ

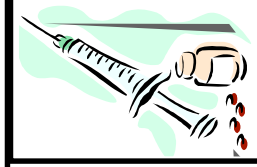

श्वेत प्रदर (LEUCORRHOEA) भाग – 2

प्रयोग-1 केला और घी: एक अच्छा पका केला छीलकर शुद्ध देशी घी छः ग्राम के साथ रोजाना सुबह खायें और ऐसी ही एक खुराक शाम को लें। आठ से 15 दिन तक लगातार खाने से महिलाओं का श्वेत प्रदर रोग ठीक हो जाता है।

विशेष :

यदि घी और केला ठंडा असर करता जान पड़े तो इसमें चार-छः बूंदे शहद की मिला लें, परन्तु ध्यान रहे शहद और घी कभी भी बराबर मात्र में न मिलायें अन्यथा विषतुल्य हो जाता है।

प्रयोग-2 चावलों की मांड :

शाम को चावल पकाकर मांड (पके चावलों का पानी) निकाल लें। तुरन्त निकाले हुए इस मांड (जो अधिक गाढ़ा हो बल्कि थोड़ा पतला हो) में बिना कुछ मिलाए, गुनगना ही दूध की तरह पी लें। प्रतिदिन शाम 5-6 बजे शाम के खाने से एक-दो घण्टे पहले, लगातार तीन से सात दिन तक लें। मांड पीने से एक दो घंटे पहले और बाद में कुछ न खायें-पियें। श्वेत प्रदर का सरल और सफल इलाज है।

सहायक उपचार :

श्वेत प्रदर में योनि-प्रदेश की सफाई का महत्व है।

1. नीम की स्वच्छ पत्तियां 30 ग्राम (मुट्ठी भर) आधा लीटर (500 ग्राम) पानी में दस-पन्द्रह मिनट उबालें। उबल जाने के बाद पानी में इनका जब कस आ जाये तब नीम के पानी को आग से उतारकर ठण्डा हो जाने दें। इस 'नीम के पानी' से योनि को दिन में एक-दो बार एक सप्ताह तक धोएं।

2. आधा लीटर कुनकुने पानी में 3 ग्राम (एक चम्मच) फिटकड़ी का बारिक चूर्ण घोल लें और स्नान करते समय गुप्त भाग को आवश्यकतानुसार दिन में एक-दो बार एक सप्ताह तक इस फिटकड़ी के पानी से धोएं। नीम के पानी या फिटकड़ी के पानी से योनि को धोने अथवा डूश लेते रहने से श्वेत प्रदर में शीघ्र लाभ होता है और गुप्तांग की दुर्गन्ध भी दूर होती है।

एलोपैथिक डाक्टर भी 500 मि. ली. पानी को उबालकर ठण्डा करने के बाद उसमें आवश्यकतानुसार 10 से 15 बूंद डिटोल मिलाकर दिन में दो-तीन बार डूश करने की सलाह देते हैं। यदि स्वस्थ महिलायें भी कम से कम सप्ताह में एक दो बार इस प्रकार योनि-प्रदेश की सफाई करती रहें तो योनि के रोगों से बचाव होता है।

पुस्तक "स्वदेशी चिकित्सा सार" -डा. अजीत मेहता "आयुर्वेद रत्न"

1Rlax&lkj

गोहाना भाग-1

20. 7. 2003

चौथे लोक के धणी राम अथवा सतगुरु या उस राधास्वामी दयाल ने जीवों के कल्याण के लिए सन्त प्रकट कर दिए हैं और सन्तों ने यह दिखा भी दिया है कि उनके नाम में वह शक्ति है जो असहाय जीव को विषय–विकारों या अन्य ऐबों से छुटवा कर उसको सत्य व पवित्र बना कर उसको अपने सब से बड़े दुख जन्म–मरण सहित सभी दुखों से छुटवा कर, उसे अनादि मुक्ति दिलवा दे। ऐसी पवित्रता पत्थर–पानी अथवा देवी–देवताओं की पूजा से तो नहीं

आ सकती है। इसी कारण से लोग इनकी पूजाओं को छोड़ कर सन्तों से नाम लेने लगे हैं। अतः देवी–देवताओं की पूजा–दक्षिणा भी बन्द होने लगी तो देवी–देवता अपनी फरियाद लेकर उस राम के पास पहुँच गए। यह वाणी भी आती है कि–**देवी देवता कहें राम से कि हमने ठौड़ बता।**

हम कहां जाये अब? आपने संत ऐसे पैदा कर दिये कि हमारी हर किसी चीज का ये खंडन करके कहते हैं कि इनमें सच्चाई नहीं है। इसलिए निज नाम को खोजो, मुक्ति उसी से मिलेगी।

तब उन देवी देवताओं को उत्तर मिला कि–

जो हम से बेमुख हैं, उनको तू लूट और खा।

यह निश्चित है कि उस परमपद व परमात्मा की प्राप्ति के लिये तो जीव को इन क्रियाओं से ऊपर उठना होगा। लोग चक्की–पानी को भी पूजते हैं। मंगलवार, शुक्रवार आदि के व्रत करते हैं, अमावस धौंकते हैं, पीपल पूजते हैं, तुलसी के पौधे की पूजा और उसका ब्याह भी करते हैं। भागवत, रामायण, गीता आदि का पाठ करते हैं, उनको कण्ठस्थ भी कर लेते हैं। हरिद्वार जाते हैं। कबीर आदि सन्तों की वाणियों का गायन भी करते

हैं। इनसे तो उनके मन में कोई परिवर्तन नहीं आता। अब जीव के सामने दो ही विकल्प हैं। चाहे वह इन क्रियाओं को कर ले अथवा वह सन्तों के नाम की शरण ग्रहण कर ले। अब यह तो एक स्वाभाविक सी बात है जो ज्यादा अच्छी चीज होगी, जीव तो उसी को अपनाएगा जैसे–किसी छोटे बच्चे के एक हाथ की मुट्ठी में गुड की डली है। वह उसे खाकर उसका आनन्द ले रहा है। यदि कोई भी आदमी उसके दूसरे हाथ में लड्डू दे देगा तो कुदरती ही बच्चे की गुड वाली मुट्ठी ढीली हो जाएगी और गुड नीचे गिर जाएगा और वह लड्डू का मजा लेने लगेगा। इसी प्रकार सन्तों के नाम की शरण में पहुँचते ही जीव स्वतः अपनी उक्त अन्य सभी क्रियाओं को छोड देता है, अन्यथा सन्त तो किसी भी धार्मिक क्रिया को नहीं छुड़वाते हैं। ऐसा खण्डन करने का उनका कोई इतिहास ही नहीं है। पर वे सच्चाई बताते हैं कि जो दो गाडियों में पाँव रखता है वह पार नहीं उतर सकता है। एक को ही अपनाना पड़ेगा। एक में तुम बैठोगे तो वह गाड़ी जहाँ भी जाएगी, तुम्हें अपनी मंजिल पर ले जाएगी।

नाम के अभ्यासी के मन में भी पवित्रता व सच्चाई उसी समय आएगी, जब वह पूरा प्रयत्न करके उनके बताए नियमों पर चलकर ध्यान–अभ्यास करेगा। सन्त नाम की दीक्षा देते समय प्रथम नेम तो यही करवाते हैं कि अभ्यासी अपनी मेहनत से कमाया पवित्र और शुद्ध अन्न खाए। जब वह पवित्र शुद्ध अन्न खाएगा तो उसका मन अपने आप ही पवित्र होगा और उसके अन्नमय–मनमय, ज्ञान–विज्ञान और आनन्द के सभी कोष स्थायी रूप में पवित्र होते चले जाएँगे। बल्कि यदि भजन नहीं बनता है तो सच्चे अभ्यासी को ध्यान न लगने पर पता चल जाता है कि आज कोई गलत अन्न खा लिया है।

जहां गुरुमुख का संग विचारों की पवित्रता को दढ करता है, उनके संग से भजन में वद्धि होगी, वहीं मनमुख का संग विचारों को इतनी तीव्रता से गिरा देता है कि स्वयं सन्तों के सत्संग तक करवाने वाले आध्यात्मिकता की कुछ उँचाई प्राप्त करने वाले जीव भी मनमुखों के संग से पतन को प्राप्त हो जाते हैं। उनके पास बैठने से जो थोड़ा बहुत भजन उनका बनता है, तो वह भी खत्म हो जाता है। इसीलिए कहते हैं कि–

गुरु माथे से उतरे शब्द बिहूना होय।
ता को काल घसीटसी रोक न सके कोय।।

सतगुरु कृपा

संसारी डाक्टर, वैद्य, हकीम तो केवल तन की बीमारियों का इलाज करते हैं। वे तो केवल तन की तकलीफ और कष्ट दूर करने का प्रयत्न ही करते हैं। परन्तु सन्त सतगुरु तो तन, मन, और सुरत के सभी प्रकार के कष्टों को हरने वाले होते हैं। इसीलिए संसार के सभी मत धर्म और महापुरुष सतगुरु के गुण गाते हैं और सतगुरु के महत्त्व का वर्णन करते नहीं थकते हैं। परन्तु सन्त सतगुरु की प्राप्ति केवल मनुष्य चोले में ही सम्भव है। इसीलिए कहते हैं कि–लाख जन्मों का पुण्य इक्ट्ठा होता है तो मानव चोला मिलता है। दो लाख जन्म के पुण्यों के प्रताप से सन्त सतगुरु और तीन लाख जन्मों के पुण्यों के प्रताप से सन्त सतगुरु से नाम की बख्शीश प्राप्त होती है। परन्तु सन्त सतगुरु पूर्ण और सच्चा हो और उस पर पक्का विश्वास भी होना चाहिए।

नैड़े बोवै, निश्चश्य उपजै, कटै काल जम फांसी।
मन मेरा होज्या नगरिया रा वासी।।

एक सत्संगी भाई रामजीलाल जी सिंगल लिखते हैं कि–

सन् 1982-83 की बात है। मेरी लड़की विवाह योग्य हो गई। बीमारी में पैसा लगने के कारण आर्थिक अवस्था भी ठीक नहीं रही। शरीर कमजोर होने के कारण अकेले का कहीं दूर आना–जाना भी असम्भव था। अतः हमें भारी चिन्ता हो गई कि रिश्ता कैसे और कहां किया जाए। इसी मध्य भरथना जिला इटावा से मेरे एक चाचा जी के लड़के का पत्र आया। उसने लिखा कि भाई साहब! लड़की को लेकर मेरे पास चला आ। परमात्मा ने चाहा तो रिश्ता हो जाएगा। घरवाली ने कहा–इतनी दूर आना जाना कठिन है और फिर ऐसी अवस्था में बिन पैसे कोई काम भी बनता नजर नहीं आ

रहा है। सो जाना व्यर्थ ही रहेगा। फिर बेमतलब सौ दो सौ रुपये खर्च हो जाएंगे, पैसे का प्रबन्ध कर लेना भी कोई सहज बात नहीं थी। फिर यह विश्वास भी नहीं हुआ कि रिश्ता हो जाएगा। अतः इस बात को खत्म करके हम सो गए।

रात को हुजूर महाराज जी ने दर्शन दिये। उन्होंने कहा रामजीलाल! अपने आपको अकेला क्यों समझता है? मैं तेरे साथ हूं। किसी भी तरह से घबराने की जरूरत नहीं है। कल लड़की को लेकर भरथना पहुंच जा। वहीं काम बन जाएगा। प्रातः उठते ही घरवाली को स्वप्न की सभी बातें बताई। उसे भी महाराज जी की बातों पर विश्वास हो गया। तत्काल ही जाने का प्रबन्ध किया गया। मैं लड़की को लेकर भाई साहब के पास भरथना पहुंच गया और हुजूर महाराज जी के बताए अनुसार बिना किसी कठिनाई के रिश्ता हो गया।

अधिक क्या कहूं संक्षिप्त रूप में मैं यह बता देता हूं कि लड़की के विवाह का प्रबन्ध ही ऊपर की ऊपर मेरे ऊपर बिना किसी आर्थिक भार के हो गया। विवाह का सभी खर्च लड़की के मामा जी ने अपने जिम्मे लेकर लड़की का विवाह कर दिया। वास्तव में वे लोग भाग्यशाली हैं जिन्हें पूर्ण और सच्चे सतगुरु का सहारा प्राप्त है। उन लोगों के जगत और अगत दोनों ही बन जाते हैं।

जिनको सतगुरु मिलिया, उनका लेखा निमड़िया।
सतगुरु मिलने पर काल का कर्ज चूक जाता है।

सत्संगी
रामजीलाल सिंगल
गांव/पो० बौन्द, जिला भिवानी।

नोट :-जिस किसी सत्संगी भाई के साथ इस प्रकार सतगुरु दया की घटना घटी हो तो प्रमाण सहित दिनोद धाम में भाई बलबीर सिंह को दे सकते हैं।

कहानी

दुर्भाग्य से एक परिवार में मुखिया (पिता) की मत्यु हो गई तो सारा बोझ मां पर आ पड़ा। उसकी दो सन्ताने थी। पवन और सरला। पवन ने पुस्तक की जिल्दबंदी का काम सीख लिया। वह घर पर काम करने लगा। सरला और उसकी मां भी उससे सहयोग करने लगी। घर का काम खत्म करके वे काम में जुट जाती और रोटी के लायक पैसे बना लेती। कई बरस बीते। भाई-बहन ने अध्ययन जारी रखा, अब साथ ही पवन ने थोड़े समय की नौकरी कर नी और सरला घर पर बच्चों पढ़ाने लगी। एक दिन पवन इन्जिनियर बना और सरला प्राध्यापिका। उनकी इस सफलता पर मां फूली न समाई। पर आप समझते हैं, यह सब कैसे हुआ? सहयोग के बूते पर। परिवार को ऊंचा उठाने की प्रबल भावना से और आपसी सहयोग और श्रम से वे ऊंची स्थिति में पहुंचे।

कभी-कभी कोई घर में बीमार हो जाता है तो सारा परिवार उसकी टहल-सेवा में जुट जाता है। कभी परिवार का एक सदस्य दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है तो पूरा परिवार उस पर जान छिड़कता है। ऐसे में हमें सहयोग का महत्व समझ में आता है।

जिस परिवार में आपस में सहयोग की भावना विद्यमान रहती है वह आदर्श परिवार है और जिस परिवार में सहयोग नहीं रहता वह नरक-तुल्य बन जाता है। अपने-अपने दायित्व के भार को वहन करना तो प्रत्येक का कर्त्तव्य है ही, इससे आगे बढ़कर हमें सहयोग का अभ्यास डालना चाहिये।

आवश्यक सूचना

सभी राधास्वामी संत संदेश मासिक समाचार पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि (पाँच वर्षीय व आजीवन सदस्यों को छोड़कर) सभी सदस्यों की सदस्यता दिसम्बर 2003 को समाप्त हो रही है। अत: पत्रिका के सभी सदस्यों से निवेदन है कि सभी सदस्य 15 दिसम्बर 2003 तक अपनी सदस्यता गृहण कर लें। अगले वर्ष यानी 1 जनवरी 2004 से 31.12. 2004 तक के सदस्यों की अग्रिम रसीद काटनी शुरु कर दी है, कोई भी सदस्य वार्षिक शुल्क 40 रुपये, 5 वर्षीय 200 रुपये व आजीवन 500 रुपये नगद बैंक ड्राफ्ट या मनिआर्डर भेजकर पत्रिका की सदस्यता ग्रहण कर सकता है। जो बहन, भाई मार्च 2004 के बाद सदस्यता के लिये बैंक ड्राफ्ट या मनिआर्डर भेजेंगे उनकी पत्रिका उसी महीने की 15 तारीख को डाक से भेजनी शुरू कर दी जायेगी, परन्तु इससे पहले की पत्रिका सदस्यों को आश्रम से स्वयं प्राप्त करनी होगी, पीछे की पत्रिका डाक द्वारा नहीं भेजी जायेगी।

अत: सभी संत संदेश पत्रिका के सदस्यों से अनुरोध है कि वे अपनी सदस्यता 15 दिसम्बर 2003 तक अवश्य ले ले। शुल्क भेजने का पता-

सचिव, राधास्वामी सत्संग (दिनोद), रोहतक रोड़, भिवानी

'राधास्वामी संत संदेश' मासिक पत्रिका के सदस्यों (पाँच वर्षीय व आजीवन सदस्यों को छोड़कर) को सूचना दी जाती है कि एक वर्षिय सदस्यों की सदस्यता दिसम्बर 2003 को समाप्त हो रही है। अत: पत्रिका के सभी सदस्यों से निवेदन है कि 15 दिसम्बर 2003 तक अपनी अग्रिम सदस्यता गृहण कर लें। अगले वर्ष यानी जनवरी 2004 से दिसम्बर 2004 तक के सदस्यों की अग्रिम सदस्यता रसीद काटनी शुरु कर दी है। यदि कोई भाई-बहन इस पत्रिका का सदस्य बनना चाहता है कृपया वह भी अपनी सदस्यता की रसीद प्राप्त कर लें। शुल्क इस प्रकार है -

वार्षिक शुल्क 40 रुपये

5 वर्षीय 200 रुपये

आजीवन 500 रुपये

शुल्क नगद/बैंक ड्राफ्ट या मनिआर्डर द्वारा भेजकर पत्रिका की सदस्यता ग्रहण कर सकता है। जो बहन, भाई मार्च 2004 के बाद सदस्यता के लिये बैंक ड्राफ्ट या मनिआर्डर भेजेंगे उनकी पत्रिका उसी महीने की 15 तारीख को डाक से भेजनी शुरू कर दी जायेगी, परन्तु इससे पहले की पत्रिका सदस्यों को आश्रम से स्वयं प्राप्त करनी होगी, पीछे की पत्रिका डाक द्वारा नहीं भेजी जायेगी।

अत: सभी सदस्यों से अनुरोध है कि वे अपनी सदस्यता 15 दिसम्बर 2003 तक अवश्य ले लें। शुल्क भेजने का पता-

सचिव, राधास्वामी सत्संग (दिनोद), रोहतक रोड़, भिवानी

।। राधास्वामी।।

राधास्वामी सत्संग दिनोद-भिवानी द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की सूचि

क्र.	पुस्तक	लेखक
1	अरमान सागर	
2	अनुभव प्रकाश	परम सन्त हुजूर कंवर सिंह जी
3	दस अवतारों की कथा	महर्षि शिवव्रतलाल जी
4	संकट मोचन रामायण	सन्त मास्टर राम सिंह जी अरमान
5	सतगुरु प्रेम	मा. कंवर सिंह जी महाराज
6	राधास्वामी योग भाग 1-6	महर्षि शिवव्रतलाल जी
7	कबीर बीजक भाग 1-3	महर्षि शिवव्रतलाल जी
8	नानक योग भाग 1-3	महर्षि शिवव्रतलाल जी
9	पांच नाम की व्याख्या	पं. फकीर चन्द जी
10	राधास्वामी निजनाम सदा की मुक्ति	मा. कंवर
11	नित नेम गुटका	सचिव
12	चाचा साहिब की डायरी	चाचा साधुराम
13	जूई से जहान्	मा. कंवर जी
14	अद्भुत उपासना योग भाग 1-2	महर्षि जी
15	सप्तऋषि ततान्त	महर्षि शिवव्रत लाल जी
16	सतगुरु महिमा	परम सन्त ताराचन्द जी
17	राधास्वामी मत प्रकाश	महर्षि शिवव्रतलाल जी
18	पंथ संदेश	महर्षि शिवव्रतलाल जी

19	कर्म रहस्य	महर्षि शिवव्रतलाल जी
20	व्यवहार ज्ञान प्रकाश	महर्षि शिवव्रतलाल जी
21	सहज भक्ति	महर्षि शिवव्रतलाल जी
22	कबीर परिचय आद्यज्ञान	
23	कबीर योग भाग-1	महर्षि शिवव्रतलाल जी
24	कबीर योग भाग-2	महर्षि शिवव्रतलाल जी
25	कबीर योग भाग-3	महर्षि शिवव्रतलाल जी
26	कबीर योग भाग-4	महर्षि शिवव्रतलाल जी
27	कबीर योग भाग-5	महर्षि शिवव्रतलाल जी
28	कबीर योग भाग-6	महर्षि शिवव्रतलाल जी
29	कबीर योग भाग 7-13	महर्षि शिवव्रतलाल जी
30	शरणागति योग	महर्षि शिवव्रतलालजी/सन्त फकीरचन्द
31	अनमोल विचार	महर्षि शिवव्रतलालजी/सन्त फकीरचन्द
32	विचारांजलि	महर्षि शिवव्रतलालजी/सन्त फकीरचन्द
33	वसीयत नामा	परम सन्त मा. रामसिंह जी अरमान
34	सफलता के साधन	
35	प्रवचन संग्रह	मा. कंवर जी महाराज
36	सारवचन वार्तिक	स्वामी जी महाराज
37	सार वचन छन्छ-बन्द (पहला + दूसरा भाग)	स्वामी जी महाराज
38	अनमोल चरित्र	राधास्वामी सत्संग (दिनोद), भिवानी
39	अरमान सागर भाग-२	सन्त रामसिंह जी अरमान
40	सत्संग के आठ वचन	महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज